२७. बातचीत : एम० आर० मसानी और ना० र० मलकानीसे[1]

२५ मई, १९३४

म० : क्या आपका मतभेद मुख्य रूपसे साधनोंके बारेमें ही है या आपको यह भी सन्देह है कि समाजवाद हिंसापर आधारित होता है?

गांधीजी : यह तथ्य ही है। इसमें सन्देहकी कोई बात नहीं। यह जरूरी नहीं कि हिंसा शारीरिक ही हो। आपकी समाजवादी पद्धति बल-प्रयोगपर आधारित है।

म० : परन्तु बल-प्रयोग उसका साध्य नहीं है। यह बहुजनहिताय ही है।

गांधीजी : हिंसा अधीरता और अहिंसा धीरताकी निशानी है। महान् धैर्यके बिना महान् परिवर्तन नहीं किये जा सकते। भावी असफलताके बीज हिंसामें विद्यमान रहते हैं। उदाहरणके लिए मान लीजिए कि १०० आदमियोंमें से पाँच इतने शस्त्र-

१; इसकी प्रस्तावनात्मक टिप्पणीमें ना० र० मलकानीने, जो गांधीजीके कार्यवाहक सचिव थे, लिखा था कि "इन टिप्पणियोंको गांधीजीने स्वीकृत किया था। यह बात २५ मई, १९३४की है। हमें सुबह सिसुआसे पातपुर तक पाँच मील पैदल चलना पड़ा . . . गांधीजी नंगे पाँव सिरपर कपड़ा रखे हुए चले। उनका दायाँ हाथ मसानीके कन्धे पर और बायाँ मेरे कन्धे पर था। उनके शब्द हमें निर्देश देते थे। उनके हाथ हमें कभी शान्त करते थे तो कभी नियंत्रित बातचीतमें 'म' मसानी और मलकानी दोनोंको ही सूचित करता है . . .।"

Scanned by CamScanner

सज्जित और शक्तिसम्पन्न हैं कि अगर ९५ असहाय लोग उनका विरोध करें तो वे उनके सिर काट ले सकते हैं। वह पाँचोंकी पूरी तरह असफलता होगी। परन्तु मान लीजिए कि ९५ में से कोई एक इन पाँचोंकी हत्या करके बाकी बचे हुए ९४ की इच्छाके विना उनपर अपना अधिकार जमा लेता है, तो आप यह नहीं कह सकते कि नया शासन सबके लिए अच्छा होगा। इसका अर्थ यह हो सकता है कि एक बुरे शासनके बाद दूसरा बुरा शासन आ जायेगा।

म० : परन्तु ९४ की इच्छा और सक्रिय सहयोगके बिना कोई अधिकार नहीं छीन सकता।

गांधीजी : हम यह मानकर चलें कि उनकी इच्छा नहीं है।

म० : परन्तु हमारी इच्छा है। समाजवादी कार्यक्रमको सब समझ सकते हैं और स्वीकार कर सकते हैं।

गांधीजी : यदि आप उड़ीसाके किसानसे व्यापारपर एकाधिकार और उद्योगको समाजवादके दायरेमें लानेके लिए बातचीत करें तो वह नहीं समझ पायेगा कि आप क्या बात कर रहे हैं।

म० : परन्तु गुजराती एवं दक्षिणका किसान भूमि-सुधारकी बात समझ सकता है।

गांधीजी : मैंने गुजराती किसानोंको गाँवमें साहूकारीका समर्थन करते और उसका पक्ष लेते हुए देखा है। वे इस तरहकी बातें करते हैं कि बनिया विपत्तिके समय उनका हित करता है। इन लोगोंमें जागृति लानेकी जरूरत है। आवश्यकतासे अधिक उच्चाकांक्षावाला कार्यक्रम रखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। मैं व्यावहारिक व्यक्ति हूँ। आपके कार्यक्रमको जिस हदतक उसपर अमल हो सकता है उस हदतक काटकर कम कर लूंगा।

म० : आजकल रुझान कृषिके विकेन्द्रीकरणकी दिशामें है। सघन खेती छोटे पैमानेपर ही हो सकती है। परन्तु उद्योगमें रुझान बड़े पैमानेपर उत्पादन और बादमें बड़े पैमाने पर नियन्त्रणके पक्षमें है। ऐसी स्थितिमें मजदूरों और पूंजीपतियोंके बीच संघर्ष अवश्यम्भावी है। कुछ ऐसे उद्योग हैं, जिनका रुझान सदा बड़े पैमानेके उद्योग बननेकी दिशामें ही रहता है।

गांधीजी : परिवहन, बीमा, विनिमय जैसे उद्योग सरकारके ही हाथमें होने चाहिए। परन्तु मैं इस बातपर जोर नहीं दूंगा कि सभी बड़े उद्योग सरकार अपने हाथमें ले ले। मान लीजिए कि कोई समझदार और विशेषज्ञ व्यक्ति है और वह किसी उद्योगको चलानेके लिए अपनी सेवाएँ प्रस्तुत करता है; वह ज्यादा पारिश्रमिक नहीं माँगता और यह सब समाजकी भलाईके लिए करता है। तो मैं इस पद्धतिको इतनी लचकदार रखूंगा कि उक्त उद्योग ऐसे व्यक्तिको संगठित करने दिया जाये।

म० : ऐसे लचीलेपनमें मुझे भी कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु शर्त यह है कि सारा निजी लाभ समाप्त कर दिया जाना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति समाजके लिए काम करनेका वायदा करता है तो उसे ऐसा करनेकी अनुमति दी जानी चाहिए।

Scanned by CamScanner

परन्तु मैं इस बातका आश्वासन चाहूँगा कि उद्योग राष्ट्रीय नीतियों पर चलाये जायें। इसलिए मैं चाहूँगा कि राज्यमें उद्योगोंका प्रतिनिधित्व क्रियात्मक आधारपर हो और हरएक व्यापारका अपना अलग प्रतिनिधित्व हो।

गांधीजी: बालिग मताधिकार पर आधारित राज्यमें यह बात निरर्थक होगी। भारत कृषि-प्रधान देश है और इसलिए बालिग मताधिकारसे खेतीको अधिक प्रधानता मिलेगी।

म०: रूसमें कुछ अलग पद्धति है। शहरी मजदूरका वोट ज्यादा कीमती होता है——चार किसानोंका वोट शहरी मजदूरके एक वोटके बराबर है। बाकी चुनाव तो हमारे कांग्रेस चुनावकी भाँति अप्रत्यक्ष होता है।

गांधीजी: मैं शहरी वोटको उस तरहकी तरजीह नहीं दूँगा। मैंने गोलमेज परिषद्में बालिग मताधिकार और गाँवके लोगों द्वारा वोट दिये जानेका प्रस्ताव आग्रह-पूर्वक रखा था। किन्तु वह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया, क्योंकि गोलमेज परिषद् प्रतिनिधि संस्था नहीं थी।

म०: परन्तु कोई भी ऐसी परिषद् जिसमें भूमिपतियों और पूंजीपतियोंके प्रतिनिधि हों बालिग मताधिकारको अस्वीकार ही करेगी। वे कहेंगे कुछ, और करेंगे कुछ।

गांधीजी: तब हमें उन्हें तर्क और अनुरोधके द्वारा अपने विचारोंके अनुकूल करना होगा। मैं तथाकथित वर्ग-संघर्षमें विश्वास नहीं करता।

म०: हम व्यक्तियोंको तो बदल सकते हैं, परन्तु पद्धतिको कभी नहीं बदल सकते। उदाहरणके लिए चम्पारनके निलहोंको ही लीजिए। वे अन्ततक नहीं माने। यदि उनपर गवर्नर द्वारा दबाव न डाला जाता तो कुछ भी न होता।

गांधीजी: मैं पक्की तौरपर ऐसा नहीं कह सकता। कुछ निलहे बदल गये थे। मुझे नहीं मालूम कि समझौतेमें निलहों और सरकारने क्या भूमिका निभायी। परन्तु यह निश्चित है कि यदि निलहोंने साथ न दिया होता तो सरकार कुछ भी नहीं कर सकती थी।

म०: परन्तु गवर्नरका रुख अमित्रतापूर्ण होता तो उन्होंने भी अन्त तक प्रतिरोध किया होता।

गांधीजी: आप बात बदल रहे हैं। मेरा सिर्फ यह कहना है कि कुछ निलहे बदल गये थे। भारतमें यूरोपियनोंके चार वर्ग है:——व्यापारी, सैनिक, असैनिक कर्मचारी और पादरी। निश्चय ही आप यह नहीं सुझाना चाहते कि इन वर्गोंके लोगोंको व्यक्तिगत रूपमें नहीं बदला जा सकता। आप हिंसाको अलग रख दें तो आप देखेंगे कि आपमें और मुझमें अधिक अन्तर नहीं है। हम दोनों लाखों भूखे लोगोंका हित चाहते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ४-८-१९३५

Scanned by CamScanner

८८. पत्र : एम० आर० मसानीको

१४ जून, १९३४

प्रिय मसानी,

जिन सवालोंको तुम मेरे पास छोड़ गये थे, मैंने उन्हें पढ़ लिया है। कांग्रेस समाजवादी दलके कार्यक्रमको भी मैंने पढ़ लिया है।

कांग्रेसमें समाजवादी दलके गठनका मैं स्वागत करता हूँ। लेकिन छपी हुई पुस्तिकामें जो कार्यक्रम छपे हैं, मुझे वे पसन्द हैं, मैं ऐसा नहीं कह सकता। मुझे ऐसा लगता है कि इसमें भारतीय परिस्थितियोंको नजरन्दाज किया गया है और इसके बहुत-सारे प्रस्तावोंमें निहित यह धारणा कि वर्गों और जन-साधारणके बीच अथवा मजदूरों और पूंजीपतियोंके बीच संघर्ष अनिवार्य है और वे पारस्परिक हितके लिए काम कभी नहीं कर सकते, मुझे ठीक नहीं लगती। मेरा खुदका एक लम्बे अरसेका अनुभव निस्सन्देह इसके प्रतिकूल है। जरूरी यह है कि मजदूर अथवा कर्मचारीगण अपने अधिकारोंको जानें और यह भी जानें कि उनपर उन्हें किस तरह कायम रहना चाहिए। और चूंकि हर अधिकारके साथ सदा ही अनुकूल कर्त्तव्य जुड़ा हुआ है, इसलिए मेरी रायमें जो अधिघोषणा कर्त्तव्य पूरा करनेकी आवश्यकता पर बल नहीं देती और यह नहीं बताती कि कर्त्तव्य क्या है, वह अधूरी है।

आप अभी यह तो नहीं चाहेंगे कि मैं आपके कार्यक्रमकी हर धाराकी जांच करूँ, फिर भी अगर आप बहुत इच्छुक हैं और मेरी सुविधाके बारेमें विचार करना आपको बुरा न लगे तो मैं आपको और जिसे आप चाहें उसे एक निश्चित समय दूंगा और तब आपके सारे कार्यक्रम पर सविस्तार आपसे बात कर सकूंगा।

आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१२६)से। सी० डब्ल्यू० ४८८४ से भी; सौजन्य : एम० आर० मसानी।

Scanned by CamScanner

२७१. उत्तर : जमींदारोंको[1]

२५ जुलाई, १९३४

प्रश्न : कराची कांग्रेसमें जनताके मूल अधिकारोंपर एक प्रस्ताव पास हुआ था। उसमें निजी सम्पत्तिको स्वीकार किया गया था; इसलिए राष्ट्रीय जमींदारोंने कांग्रेसका समर्थन किया। परन्तु कांग्रेसका नया समाजवादी दल निजी सम्पत्तिको खत्म करनेकी धमकी दे रहा है। कांग्रेसकी नीतिपर इसका क्या असर पड़ेगा? आपके खयालमें क्या इससे वर्ग-संघर्षको बढ़ावा नहीं मिलेगा? क्या आप उसे रोकेंगे?

उत्तर : कराची प्रस्ताव केवल अगली कांग्रेसके खुले अधिवेशनमें ही बदला जा सकता है। पर मैं आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि मैं सम्पत्तिवान वर्गोंको, बिना किसी न्यायोचित कारणके, उनकी निजी सम्पत्तिसे वंचित करनेके पक्षमें नहीं हूँ।

१. साधन-सूत्रके अनुसार यू० पी० आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा यह शामके ५ बजे भेंट किया गया था। इसमें आर्यसमाज द्वारा किये गये कार्य, विशेषतः अस्पृश्यता-निवारण-आन्दोलनके सिलसिलेमें किये गये कार्यका विवरण था।

२. साधन-सूत्रके अनुसार यह "महादेव देसाई द्वारा लिखा गया" और "गांधीजी द्वारा ठीक किया गया" टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुआ था। गांधीजी ने "जमींदारों द्वारा पढ़कर सुनाये गये" प्रश्नोंका उत्तर दिया था।

Scanned by CamScanner

मेरा लक्ष्य तो आपके दिलोंतक पहुँचना और आपको बदलना है, जिससे कि आप अपनी सारी सम्पत्तिको रैंयतकी अमानत मानें और उसका उपयोग मुख्यतया उसकी भलाईके लिए करें।

मैं यह बात तो मानता हूँ कि कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंमें 'समाजवादी' दल नामके एक नये दलका जन्म हुआ है, किन्तु यह दल यदि कांग्रेसको अपने साथ ले जानेमें सफल हो गया, तो क्या होगा सो मैं नहीं कह सकता। फिर भी मुझे पक्का यकीन है कि यदि हमारे करोड़ों लोगोंका पूरी तरह निष्पक्ष असन्दिग्ध मत लिया जाये तो वे सम्पत्तिवान वर्गोंकी सारी सम्पत्ति छीननेके पक्षमें मत नहीं देंगे। मैं तो पूंजी व श्रम और जमींदारों व रैंयतके सहयोग और तालमेलके लिए प्रयत्नशील हूँ। आप कांग्रेसमें उसी तरह शामिल हो सकते हैं जैसेकि गरीब-से-गरीब लोग चार आना चन्दा देकर और कांग्रेसके सिद्धान्तोंमें विश्वास प्रकट करके उसमें शामिल हो सकते हैं।

फिर भी मैं आपको एक चेतावनी दे देना चाहता हूँ। मिल-मालिकोंसे मैंने कहा है कि वे अकेले ही मिलोंके मालिक नहीं हैं। मजदूरोंका भी मिल्कियतमें बराबरका हिस्सा है। इसी तरह मैं आपसे कहूंगा कि जमीनके जितने मालिक आप हैं उतनी ही रैंयत भी है और आपको अपनी आमदनी विलासिता या फिजूलखर्चीमें नहीं उड़ानी चाहिए, बल्कि रैंयतकी भलाईके लिए काममें लानी चाहिए। अपनी रैंयतको यदि आप एक बार यह महसूस करा दें कि आपके साथ उसका पारिवारिक नाता है और उसमें सुरक्षाकी यह भावना पैदा हो जाये कि परिवारके सदस्य होनेके नाते उसके हितोंको आपके हाथों कोई क्षति नहीं पहुँचेगी, तो आप यह यकीन कर सकते हैं कि आपमें और उनमें कोई वर्ग-संघर्ष नहीं हो सकता।

वर्ग-संघर्ष भारतकी मूल प्रकृतिके लिए विजातीय तत्त्व है और वह, सबके लिए मूल अधिकार और सबके लिए समान न्यायके व्यापक आधारपर, एक प्रकारका साम्यवाद विकसित कर सकती है। मेरी कल्पनाका रामराज्य राजा और रंकको एक-से अधिकार देता है।

आप यह यकीन कर सकते हैं कि मैं अपनी पूरी शक्ति और सारा प्रभाव वर्ग-संघर्षको रोकनेमें लगाऊँगा। स्वयं अपनेपर मैंने जो प्रतिबन्ध लगा रखा है, तीन अगस्तको जब वह समाप्त हो जायेगा तो मैं क्या करूँगा, यह अभी मुझे पता नहीं है। पर मैं अपनी ओरसे पुनः जेल न जानेकी पूरी कोशिश करूँगा। जिस स्थितिकी अभी मुझे जानकारी नहीं है, उसके बारेमें निश्चयके साथ पहलेसे कुछ कहना कठिन है। पर, मान लीजिए, आपको अनुचित रूपसे आपकी सम्पत्तिसे वंचित करनेकी कोशिश की जाती है तो आप मुझे अपने पक्षमें लड़ता हुए पायेंगे।

विधानसभाके अगले चुनावोंमें हम कांग्रेसी उम्मीदवारोंका समर्थन करना चाहते हैं। पर वे लोग विधानसभामें क्या नीति अपनायेंगे, इसके बारेमें हमें आशंका है। क्या आप संसदीय बोर्डको हमारी आशंकाएँ दूर करनेके लिए राजी कर सकते हैं?

इस विषयपर मैं आपको संसदीय बोर्डके साथ विचार-विमर्श करनेको आमन्त्रित करता हूँ। परन्तु मैं यह जानता हूँ कि कोई भी सदस्य निजी सम्पत्तिको जब्त करने

Scanned by CamScanner

या खत्म करनेकी बात नहीं करेगा। रैयतके साथ आपके जो सम्बन्ध हैं, उनमें मौलिक सुधार करनेपर वे जरूर जोर देंगे। पर वह आपके लिए कोई नई चीज नहीं होनी चाहिए। सर मैल्कम हेली[1] और लॉर्ड इर्विन तक ने आपसे यह अपील की है कि आप युगकी भावनाको समझें और अपना जीवन उसके अनुरूप बनायें। आप यदि केवल इतना करें तो यह निश्चित है कि हम एक विशुद्ध समाजवाद विकसित कर सकेंगे।

पश्चिमका समाजवाद और साम्यवाद कुछ ऐसी धारणाओंपर आधारित हैं जो हमारी धारणाओंसे मूलतः भिन्न हैं। इस तरहकी एक धारणा उनका यह विश्वास है कि मनुष्यकी प्रकृति मूलतः स्वार्थी है। मैं इसमें विश्वास नहीं करता, क्योंकि मैं यह जानता हूँ कि मनुष्य और पशुमें मूल भेद यह है कि पहला अपनी अन्तरात्माकी पुकारके अनुरूप कार्य कर सकता है और उसमें पशुके-से जो आवेग हैं, उनसे वह ऊपर उठ सकता है। इसीलिए वह स्वार्थ और हिंसासे, जिनका सम्बन्ध पाशविक प्रकृतिसे है मनुष्यकी नित्य आत्मासे नहीं, ऊपर उठ सकता है।

यह हिन्दू-धर्मकी मूल धारणा है और इस सत्यकी खोजके पीछे वर्षोंका तप और संयम रहा है। इसीलिए जहाँ हमारे यहाँ ऐसे संत हुए हैं जिन्होंने आत्माके रहस्योंको खोजनेके लिए अपने शरीर स्वाहा कर दिये और प्राण त्याग दिये, वहीं पश्चिमकी तरह हमारे यहाँ ऐसा कोई नहीं हुआ जिसने पृथ्वीके दूरतम या उच्चतम प्रदेशोंकी खोजके लिए अपने प्राण त्यागे हों। हमारा समाजवाद या साम्यवाद इसीलिए अहिंसापर तथा श्रम व पूँजी और जमींदार व रैयतके सामंजस्यपूर्ण सहयोगपर आधारित होना चाहिए।

अतः कांग्रेसके सिद्धान्त या नीतिमें ऐसा कुछ नहीं है जिससे आपको आतंकित होनेकी जरूरत हो। यदि आप अनुमति दें तो मैं कहूँगा कि मनमें भय और आशंकाएँ आपके स्वयं दोषी होनेके ही कारण हैं। जाने-अनजाने आप जिन अन्यायोंके दोषी रहे हैं, उन्हें खत्म कर दीजिए और कांग्रेस व कांग्रेसियोंसे आपको जो भय है उसे दूर भगाइये।

जमींदार और रैयतके सम्बन्धोंको यदि आप एक बार नया मोड़ दे दें, तो आप देखेंगे कि हम आपके साथ होंगे और आपके निजी अधिकारों और सम्पत्तिकी बड़ी सजगतासे रक्षा करेंगे। जब मैं 'हम' कहता हूँ, तो मेरे दिमागमें पण्डित जवाहरलाल भी होते हैं, क्योंकि मुझे यकीन है कि अहिंसाके इस मूल सिद्धान्तपर हममें कोई मतभेद नहीं है। बेशक, वे सम्पत्तिके राष्ट्रीयकरणकी बात करते हैं, पर उससे आपको आतंकित होनेकी जरूरत नहीं है।

राष्ट्र सम्पत्तिको व्यक्तियोंको सुपुर्द किये बिना उसपर अपना स्वामित्व रख ही नहीं सकता। वह केवल उसके न्यायोचित और पक्षपात-रहित उपयोगकी गारंटी करता है और उन सभी दुरुपयोगोंको रोकता है जो संभाव्य हैं। अपनी सम्पत्तिको रैयतकी भलाईके लिए अपने पास रखनेमें आपको कोई आपत्ति हो सकती है, मैं

१. संयुक्त प्रान्तके गवर्नर।

Scanned by CamScanner

२७७. बातचीत : समाजवादियोंके शिष्टमण्डलके साथ[2]

बनारस
२७ जुलाई, १९३४

पता चला है कि शिष्टमण्डलके सदस्योंने, जिन्हें गांधीजी ने मुक्त और खुले विचार-विमर्शके लिए बुलाया था, उन्हें बताया कि कांग्रेसका इस समय जो कार्यक्रम है, वह समाजवादियोंकी माँगको देखते हुए बहुत अपर्याप्त है और उन्हें, कांग्रेस कार्यकारी समितिपर अपने असरको काममें लाते हुए, समाजवादी सम्मेलनके पटना-प्रस्ताव में रखा गया समाजवादी कार्यक्रम पास करवाना चाहिए।

१. साधन-सूत्रमें चन्द्रशंकर शुक्लने स्पष्ट किया है कि यह पत्र बनारसमें कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठकसे पहले लिखा गया था।

२. उनके नेता थे, आचार्य नरेन्द्रदेव।

ऐसा समझा जाता है कि गांधीजी ने कांग्रेस कार्यकारी समिति और उसके कार्यक्रमपर समाजवादियोंके आये दिनके अयुक्तियुक्त आक्षेपोंकी निन्दा की और समाजवादियोंसे साफ-साफ यह कह दिया कि वे कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंमें अनावश्यक फूट डालनेकी कोशिश किये बिना या तो कांग्रेसके फैसलेके पाबन्द रहें या फिर कार्यकारी समिति सहित कांग्रेसकी पूरी मशीनका भार अपने ऊपर ले लें। यदि वे चाहें तो वे स्वयं और कार्यकारी समितिके अन्य सदस्य उन्हें नियन्त्रण सौंपने और उनके लिए जगह छोड़नेको तैयार हैं।

समाजवादी, जाहिर था, इससे हैरान रह गये और वे मुख्यतया निराश ही लौटे। पर उन्हें गांधीजी के इस आश्वासनसे थोड़ी-बहुत शान्ति मिली कि वे उनके सुझावोंको कार्यकारी समितिके आगे रखेंगे और पूरी तरह सलाह-मशविरा करके उससे एक ऐसा प्रस्ताव पास करवायेंगे जिसमें समाजवाद, सम्पत्तिकी जब्ती, आदिके बारेमें कांग्रेसका रुख स्पष्ट किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-७-१९३४

Scanned by CamScanner

२९२. पत्र : नरेन्द्रदेवको

बनारस
२ अगस्त, १९३४

प्रिय नरेन्द्रदेव,

थोड़े दिन आपके साथ रहते हुए और आपके आतिथ्यका सुख भोगते हुए दो-बार समाजवादी मित्रोंके साथ मेरी हार्दिक भेंट हुईं; उनके लिए मैं आपका बहुत ही आभारी हूँ।

आपके कार्यक्रमके मसौदेको पढ़ने और उसकी आलोचना करनेका मैंने आपसे वायदा किया था। जितने ध्यानसे मैं पढ़ना चाहता था, उतने ध्यानसे उसे नहीं पढ़ पाया हूँ। इसलिए इसे किसी भी तरह विस्तृत नहीं, एक सरसरी आलोचना ही समझना चाहिए।

मेरे खयालसे जबतक आप इस दलको कांग्रेस संगठनका अंग बनानेकी अनुमति न माँगें, इसे 'कांग्रेस समाजवादी दल' कहना गलत है। पर इसे 'कांग्रेसजनोंका अखिल भारतीय समाजवादी दल' कहना पूर्णतया उचित होगा। मुझे यकीन है कि इस अन्तरके महत्त्वको आप समझ जायेंगे।

कांग्रेसका न्यायोचित और शान्तिपूर्ण उपायोंसे पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेका जो उद्देश्य है, आपके संविधानके मसौदेमें मुझे उसकी स्वीकृति नहीं मिली।

यदि उसे जान-बूझकर छोड़ दिया गया है तो मैं यह बात समझ सकता हूँ, क्योंकि आपका उद्देश्य कांग्रेसके उद्देश्यसे बहुत भिन्न है। आपका शायद यह दावा है कि वह कांग्रेसके उद्देश्यसे कहीं प्रगतिशील है। फिर भी, आप अपनेको कांग्रेसका एक दल नहीं कह सकते।

कांग्रेसका उद्देश्य स्वाधीन राज्य स्थापित करना है। वह राज्य किस तरहका होगा, इसका हम अभी धुंधला-सा अनुमान ही लगा सकते हैं। उसकी कुछ विशेषताएँ हम निर्धारित कर चुके हैं। अनुभव हमें रोज यह सिखा रहा है कि उनमें नई चीजें जोड़नी होंगी। परन्तु समाजवादी उद्देश्यका आपका जो प्रतिपादन है, वह मुझे भयभीत करता है, तीनों सिद्धान्तोंके फलितार्थ इतने व्यापक हैं कि मेरी समझसे बाहर हैं। वे कार्यक्रमको नशीला बना देते हैं, जबकि सभी तरहके नशोंसे मुझे डर लगता है।

Scanned by CamScanner

अब मैं, दृष्टान्तके रूपमें, आपके कार्यक्रमके उन मुद्दोंको लेता हूँ जो मुझे आपत्तिजनक लगते हैं। ७ और ८ मुद्दे कांग्रेसकी वर्तमान नीतिके प्रतिकूल हैं। यद्यपि जीवन-भर मैं अपनेको जन-साधारणके साथ एकाकार करता आया हूँ और निजी सम्पत्तिका मैंने त्याग कर दिया है, फिर भी मेरा इरादा नरेशों और जमींदारोंको खत्म करनेका नहीं है और न जमीनको फिरसे किसानोंमें बाँटनेका ही है। मेरा लक्ष्य नरेशों और जमींदारोंको सुधारना है। जमीनका जबर्दस्ती फिरसे बँटवारा किये बिना मुजारोंके लिए ऐसे अधिकार प्राप्त किये जा सकते हैं जो वस्तुतः मिल्कियत-जैसे ही होंगे। ११ वाँ मुद्दा, जिसका ७-८ और कुछ अन्य मुद्दे खण्डन करते लगते हैं, मुझे पसंद है। आवश्यकताओंके पहले यदि आप 'न्यायोचित' शब्द रख सकें, तो मेरी रायमें हरेकको उसकी 'आवश्यकताओंके अनुसार एक निर्दोष सूत्र हो सकता है। हमारे करोड़ों . . .[1] में जो सबसे असहाय और बेसहारा हैं, उनके लिए आप जो-कुछ भी चाह सकते हैं, उस सबका सार अकेले इसी सूत्रमें आ जाता है। आपका पाँचवाँ तरीका, जैसा मैं उसे समझा हूँ, अहिंसाका प्रतिवाद है। संवैधानिक प्रश्नपर ब्रिटिश सरकारके साथ किसी भी अवस्थामें बातचीतके लिए तैयार न होनेमें क्या औचित्य है, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ। कांग्रेसने यह नीति उस समय भी नहीं अपनाई थी। जब असहयोग पूरे जोर पर था। मुझे यकीन है कि यह चीज अधीर होकर ही डाल दी गई है।

आपकी 'मजदूरों और किसानोंकी आम हड़तालें', जिनपर किसी तरहका कोई प्रतिबन्ध नहीं है, संयत और अहिंसात्मक कार्यक्रमके लिए बहुत ही खतरनाक हैं।

आपकी तात्कालिक माँगें, केवल कुछ मुद्दोंको छोड़कर, आकर्षक हैं। पर आपके तरीकोंमें मुझे ऐसा कुछ नहीं मिला जो यह दिखाए कि आपको तुरन्त उनकी प्राप्ति की कोई आशा है।

कुछ बहुत ही स्पष्ट चीजें छूट गई हैं, जिनकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ:

अस्पृश्यता-निवारण।

साम्प्रदायिक एकता।

खद्दर जन-साधारणसे एकात्मताका प्रतीक है और सालमें चार-छः महीने बेकार रहनेवाले लाखों लोग, जबतक उन्हें कोई और बेहतर धन्धा न मिल जाये, इस धन्धेको तुरन्त अपना सकते हैं।

मद्य और मादक पदार्थोंका पूर्ण निषेध।

मैं इस बातके पक्षमें हूँ कि समूचे संविधानका कड़ाईसे संशोधन होना चाहिए। हम दोनोंके मार्गमें भारी अड़चन यह है कि जवाहरलाल, जिन्होंने हमें समाजवादका मन्त्र दिया, हमारे बीचमें नहीं हैं। मैं यह समझता हूँ कि जब मुझे और अन्य बूढ़ोंको विश्रामकी अनुमति मिल जायेगी, जिसके कि हम सर्वथा अधिकारी हैं, तो कांग्रेस के काँटोंके ताजका स्वाभाविक उत्तराधिकारी उन्हें ही होना है। मेरा ऐसा विश्वास

१. साधन-सूत्रमें यहाँपर अस्पष्ट है।

Scanned by CamScanner

है कि यदि वे हमारे बीचमें होते तो गति धीरे-धीरे तेज करते। मेरा सुझाव यह है कि आप वैज्ञानिक समाजवादकी बजाय, जैसाकि आपके कार्यक्रमको नाम दिया गया है, देशको व्यावहारिक समाजवाद दें, जो भारतीय परिस्थितियोंके अनुरूप हो। मुझे इस बातकी खुशी है कि जो कार्यक्रम आपने मुझे दिया है वह, इसी उद्देश्यके लिए नियुक्त एक प्रभावशाली समिति द्वारा तैयार किया होनेपर भी, अभी एक मसौदा ही है। इसलिए अपने कार्यक्रमको अन्तिम रूप देते हुए यदि आप ऐसे लोगोंसे सहयोग करें जिनका झुकाव समाजवादकी ओर हो और जिन्हें वास्तविक परिस्थितियोंका अनुभव हो, तो वह बुद्धिमत्ता होगी।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
महात्मा, खण्ड-३, पृ० ३४४-४५ के बीचकी प्रतिकृति।

Scanned by CamScanner

परिशिष्ट—५

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[१]

आनन्द भवन,
इलाहाबाद
१३ अगस्त, १९३४

प्रिय बापू,

मात्र छः महीनेके पूर्ण एकान्त और निष्क्रियताके बाद, मैं गत २७ घंटोंकी चिन्ता, उत्तेजना और हलचलमें अपनेको खोया-खोया-सा महसूस कर रहा हूँ। मैं बहुत थकान महसूस कर रहा हूँ। यह पत्र मैं आपको आधी रातको लिख रहा हूँ। दिन-भर लोगोंकी भीड़ आती रही है। अगर मौका मिला तो मैं पुनः आपको पत्र लिखूंगा, लेकिन कुछ महीनोंतक मैं शायद ही ऐसा कर पाऊँ। अतः मैं आपको संक्षेप में यह बताने जा रहा हूँ कि गत पांच-एक महीनोंके कांग्रेसके विभिन्न महत्वपूर्ण निर्णयोंपर मेरी क्या प्रतिक्रिया रही है। मेरे सूचनाके स्रोत स्वभावतः सीमित रहे

१. देखिए, पृ० ३०१।
२. देखिए पृ० ३३६-३७ तथा ३४८-४९।

हैं, फिर भी मैं समझता हूं कि वे इस लायक थे कि मैं घटनाओंके सामान्य रुखके बारेमें काफी ठीक धारणा बना सकता था।

जब मैंने यह सुना कि आपने सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कर दिया है तो मुझे दु:ख हुआ। पहले मुझे संक्षिप्त घोषणा ही मिली। बहुत बादमें मैंने आपका वक्तव्य पढ़ा और उससे मेरे मनको इतना गहरा धक्का लगा जितना कि पहले कभी नहीं लगा था। स० अ० की समाप्तिको सह लेनेको मैं तैयार था। परन्तु उसके लिए आपने जो कारण बताये तथा भावी कार्यके लिए जो सुझाव दिये, उनसे मैं आश्चर्यचकित रह गया। अचानक बड़ी तीव्रतासे मुझे लगा कि मेरे भीतर कुछ टूट गया है—वह सम्बन्ध जिसे मैंने बहुमूल्य समझा था, टूट गया है। इस विराट संसारमें मैंने अपने-आपको भयावह रूपसे अकेला पाया। करीब-करीब बचपनसे ही मैं कुछ-कुछ अकेलापन महसूस करता आया हूँ। लेकिन कुछेक सम्बन्धोंने मुझे शक्ति दी, कुछ मजबूत सहारोंने मुझे खड़ा रखा। वह अकेलापन कभी गया तो नहीं, परन्तु उसमें कमी आ गई। लेकिन अब मैं अपनेको एक निर्जन द्वीपपर बिलकुल अकेला, परित्यक्त और घटना-प्रवाहसे विच्छिन्न पा रहा हूँ।

मनुष्यमें अपनेको परिस्थितियोंके अनुरूप ढालनेकी असीम शक्ति होती है, और इसलिए मैंने भी अपनेको कुछ हदतक नयी परिस्थितियोंके अनुरूप ढाला। इस विषयमें मेरी अनुभूतिकी तीव्रता, जो करीब-करीब शारीरिक दर्द-सी थी, गुजर गई, उसकी धार कुण्ठित हो गई। परन्तु एकके-बाद-दूसरे धक्के तथा घटनाओंके तांते ने उस धारको फिर पैना कर दिया, तथा मेरे दिल और दिमागको शान्ति या राहत न मिलने दी। अपने पाससे गुजर जानेवाली भीड़से ही नहीं, अपितु जिन्हें मैं प्रिय और घनिष्ठ मित्र मानता था, उनसे भी समन्वय स्थापित न कर सकने और बिलकुल अजनबी रहनेकी आत्मिक अलगावकी वह अनुभूति मुझे फिर महसूस हुई। इस बारका कारावास मेरे धैर्यकी पहलेके किसी भी कारावाससे कहीं कठिन परीक्षा थी। मेरी तो प्रायः यह इच्छा होती थी कि सभी समाचारपत्रोंको मुझसे दूर रखा जाये, ताकि मैं बार-बारके धक्कोंसे बच सकूं।

शारीरिक रूपसे मैं काफी ठीक रहा। जेलमें मैं हमेशा ठीक रहता हूँ। मेरा शरीर अच्छी तरह काम करता रहा है और काफी हदतक दुर्व्यवहार और तनाव सह सकता है। और चूंकि मुझमें यह दम्भ है कि मेरा भाग्य जिस देशसे बंधा है, मैं उसके लिए अभी भी कुछ कारगर काम कर सकता हूँ, इसलिए मैंने अपने शरीर की अच्छी देखभाल भी की है।

लेकिन मैंने प्रायः यह सोचा है कि कहीं मैं गोल छेदमें चौकोर खूंटा या समुद्र द्वारा तिरस्कृत और उसकी सतहपर इधर-उधर फेंका जानेवाला अहंकारका बुलबुला तो नहीं हूँ। लेकिन दम्भ और आत्माभिमानकी विजय हुई तथा मेरे अन्दर काम करनेवाले बौद्धिक तंत्रने हार नहीं मानी। वे आदर्श जिन्होंने मुझे काम करनेके लिए प्रेरित किया और तूफानी मौसमम मुझे उल्लसित रखा, यदि उचित हैं—और मुझमें यह विश्वास हमेशा बढ़ता गया है कि वे उचित हैं—तो उनकी जीत होगी ही, भले ही हमारी पीढ़ी उस जीतको देखनेके लिए जिन्दा न रहे।

Scanned by CamScanner

लेकिन इस सालके लम्बे और थकाऊ महीनोंमें, जब मैं अपनी निस्सहायतापर खीझता हुआ मूक एवं दूर का दर्शक बना था, उन आदर्शोंका क्या हुआ? रुकावटें और क्षणिक पराजय तो प्रायः हर बड़ी लड़ाईमें मिलती हैं। उनसे दुःख होता है, परन्तु मनुष्य प्रायः शीघ्र ही फिर ठीक हो जाता है। यदि आदर्शोंकी ज्योति मद्धिम न होने दी जाये और सिद्धान्तोंका लंगर अडिग रहे तो वह शीघ्र ठीक हो जाता है। लेकिन जो-कुछ मैंने देखा, वह ऐसी रूकावट और पराजय नहीं थी, वह तो आत्मिक पराजय थी जो सबसे भयावह है। यह न सोचें कि मैं कौंसिल-प्रवेशकी बात कर रहा हूँ। मैं उसे बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं मानता। कुछ परिस्थितियोंमें तो मैं खुद विधान-मण्डलमें प्रवेश करनेकी कल्पना कर सकता हूँ। लेकिन चाहे मैं विधान-मण्डलमें काम करूँ या उसके बाहर, मैं एक क्रांतिकारीकी तरह काम करता हूँ, जिसका अर्थ है मूलभूत और क्रांतिकारी राजनैतिक एवं सामाजिक परिवर्तनोंके लिए काम करना, क्योंकि मेरा विश्वास है कि कोई और परिवर्तन भारत और संसारको शान्ति या सन्तोष नहीं दे सकता।

मैंने तो ऐसा ही सोचा था। लेकिन, जाहिर है कि बाहर काम करनेवाले नेताओंने ऐसा नहीं सोचा। वे लोग उस युगकी भाषा बोलने लगे जो असहयोग आन्दोलन और सविनय अवज्ञा आन्दोलनका उन्माद सिरपर चढ़नेसे पहले ही बीत चुका था। कभी-कभी वे वैसे ही शब्दों एवं वाक्योंका प्रयोग करते थे, परन्तु वे शब्द मृत थे, उनमें जीवन या वास्तविक अर्थ नहीं था। एकाएक कांग्रेसके अग्रणी नेता वे लोग बन गये जिन्होंने हमारी राहमें रोड़ें अटकाये थे, हमारी टांगें खींची थीं, जो संघर्षसे दूर रहे थे और जिन्होंने मुसीबतकी घड़ीमें विरोधी पक्षका साथ तक दिया था। वे हमारे स्वतन्त्रता-मन्दिरके महापुजारी बन गये और बहुत-से बहादुर सैनिकोंको, जिनके कन्धोंपर लड़ाईकी गहमागहमीमें भारी बोझ रहा, मन्दिरके प्रांगणमें भी नहीं घुसने दिया गया। वे लोग अछूत और न मिलने लायक माने गये। यदि उन्होंने अपनी आवाज़ उठाई और इन नये महापुजारियोंकी आलोचना की, तो शोर मचाकर उनकी आवाज दबा दी गई और कहा गया कि वे उद्देश्यके विरुद्ध द्रोह कर रहे हैं, क्योंकि उन्होंने पवित्र स्थानकी सुव्यवस्था बिगाड़ी है।

और इस प्रकार बड़ी धूमधाम और समारोहके साथ भारतीय स्वतन्त्रताकी पताका उन्हें सौंप दी गई, जिन्होंने हमारे राष्ट्रीय संघर्षकी चरमावस्थामें दुश्मनके इशारेपर, वस्तुतः उसे नीचे झुकाया था; जिन्होंने आसमान सरपर उठाकर घोषणा की थी कि उन्होंने राजनीति छोड़ दी है — क्योंकि तब राजनीति खतरेसे खाली नहीं थी, लेकिन ज्योंही राजनीति खतरेसे खाली हुई वे छलांग लगाकर अगली पंक्तिमें आ धमके।

और कांग्रेस तथा देशकी ओरसे बोलते हुए उन्होंने अपने सामने उद्देश्य क्या रखे? असली मसलोंसे बचना; जहाँतक हिम्मत की जा सकती थी वहाँतक कांग्रेसके राजनैतिक लक्ष्यतक को हल्का करना; प्रत्येक निहित स्वार्थके प्रति सदय उत्कंठा दिखाना; स्वतन्त्रताके घोषित शत्रुओंके सामने नतमस्तक होना; परन्तु प्रगतिशील

Scanned by CamScanner

और संघर्षशील कांग्रेसियोंका वड़ी उग्रता और हिम्मतके साथ विरोध करना—यही सब घृणित कृत्य। क्या गत कुछ वर्षोंसे कांग्रेस बड़ी तेजीसे सिमटकर लज्जास्पद कलकत्ता कॉरपोरेशनका महज एक परिवर्धित संस्करण नहीं बनती जा रही है? क्या बंगाल कांग्रेसके प्रमुख धड़ेको आज "श्री नलिनीरंजन सरकार विकास समिति" का नाम नहीं दिया जा रहा है? ये वही सज्जन हैं जिन्हें उस समय, जबकि हममें से ज्यादातर जेलमें थे और सविनय अवज्ञा जोरोंपर मानी जाती थी, सरकारी अधिकारियों, होम मेम्बरों तथा ऐसे ही अन्य लोगोंका स्वागत करनेमें आनन्द मिलता था। और क्या दूसरा धड़ा भी शायद ऐसे ही प्रशंसनीय उद्देश्यवाली इसी तरहकी समिति नहीं है? लेकिन यह दोष केवल बंगालमें ही नहीं है। प्रायः सब जगह ऐसी ही प्रवृत्ति है। कांग्रेस आज सिरसे पैरतक एक ऐसा दल है जिसमें अवसरवादका बोलबाला है।

इस स्थितिके लिए कार्य-समिति प्रत्यक्ष रूपसे जिम्मेदार नहीं है। तथापि कार्य-समितिको जिम्मेदारी स्वीकार करनी ही चाहिए। नेता और उनकी नीति ही अनुयायिओंकी गतिविधियाँ निर्धारित करते हैं। अनुयायियोंपर दोषारोपण करना न तो उचित है और न न्यायसंगत ही। 'नाच न जाने आंगन टेढ़ा' वाली कहावत प्रत्येक भाषामें किसी-न-किसी रूपमें मिलती है। समितिने हमारे आदर्शों और उद्देश्योंमें अस्पष्टताको जान-बूझकर बढ़ावा दिया है, जिसके फलस्वरूप न केवल भ्रान्ति फैलेगी, अपितु प्रतिक्रियाके दौरमें उत्साह-भंग भी होगा और अवसरवादी प्रतिक्रियावादी लोग उभरेंगे।

मैं विशेष रूपसे राजनैतिक उद्देश्योंकी बात कर रहा हूँ, जो कांग्रेसका खास कार्यक्षेत्र है। मैं समझता हूँ कि कांग्रेसके लिए वह समय कभी का आ चुका है जब उसे सामाजिक और आर्थिक मसलोंपर स्पष्ट रूपसे विचार करना चाहिए। लेकिन मैं मानता हूँ कि इन मसलोंपर शिक्षा देनेमें समय लगता है और कांग्रेस समग्र रूपसे अभी वहाँतक नहीं जा सकती जहाँतक कि मैं चाहता हूँ। परन्तु ऐसा लगता है कि कार्य-समिति इस विषयके सम्बन्धमें चाहे कुछ जानती है या नहीं, पर जिन्होंने इस विषयका विशेष अध्ययन किया है और जो इसपर निश्चित विचार रखते हैं, उनकी भर्त्सना करने और उनका बहिष्कार करनेको वह एकदम इच्छुक हैं। जिन विचारोंके बारेमें ऐसा विख्यात है कि संसारके योग्यतम और सर्वाधिक त्यागी लोगोंका उनपर विश्वास है, उन्हें समझनेकी कोई कोशिश नहीं की गई है। वे विचार चाहे ठीक हों या गलत, उनकी भर्त्सना करनेसे पहले कार्य-समितिको उन्हें कुछ हदतक समझनेकी चेष्टा तो करनी ही चाहिए। एक तर्कयुक्त दलीलका जवाब भावुक अपीलों अथवा इस सस्ती टिप्पणीसे देना कि भारतकी परिस्थितियाँ भिन्न हैं तथा जो आर्थिक नियम दूसरी जगह लागू होते हैं वे भारतमें काम नहीं करते, शायद ही उचित है। इस विषयपर कार्य-समितिके प्रस्तावमें समाजवादके मूल तत्त्वोंके सम्बन्धमें ऐसी आश्चर्यजनक अज्ञानता झलकती थी कि उसे पढ़कर और यह सोचकर कि उन्हें भारतके बाहर भी पढ़ा जा सकता है, काफी कष्ट होता था। ऐसा जान पड़ा कि समितिकी

Scanned by CamScanner

प्रवल इच्छा विभिन्न निहित स्वार्थोंको आश्वासन देना था, भले ही उसके लिए मूर्खता की भी बात क्यों न कहनी पड़े।

समाजवादके विषयपर विचार करनेका एक विचित्र तरीका यह है कि इस शब्दको, जिसका अंग्रेजी भाषामें एक निश्चित अर्थ है, बिलकुल दूसरे अर्थमें प्रयुक्त किया जाता है। शब्दोंका प्रयोग अपने व्यक्तिगत अर्थोंमें करना विचार-विनिमयमें सहायक नहीं होता। किसी व्यक्तिका पहले यह कहना कि वह इंजन-चालक है और फिर बादमें यह बात जोड़ना कि उसका इंजन काठका है और उसे बैल खींचते हैं, इंजन-चालक शब्दका दुरुपयोग ही है।

यह पत्र आशासे अधिक लम्बा हो गया है और रात काफी बीत चुकी है। दिमाग थका होनेके कारण शायद यह उलझे और असम्बद्ध तरीकेसे लिखा गया है। फिर भी मेरे मनकी कुछ झलक तो इसमें दिखाई देगी ही। पिछले कुछ महीने मेरे लिए, और मैं समझता हूँ बहुत-से दूसरे लोगोंके लिए भी, बहुत कष्टकर रहे हैं। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि आधुनिक संसारमें, और शायद प्राचीन संसारमें भी, दूसरोंकी जेबसे कुछ लेनेकी बजाय कुछ लोगोंके दिलोंको तोड़ना ही प्रायः पसन्द किया जाता है। जेब वास्तवमें दिल, दिमाग, शरीर और मानवीय न्याय व गरिमासे अधिक कीमती और प्यारी है।

एक और विषय है जिसकी मैं चर्चा करना चाहूँगा। वह है, स्वराज भवन ट्रस्ट। मैं समझता हूँ कि कार्य-समितिने हालमें ही स्वराज भवनकी सार-सम्भालके सवालपर विचार किया था और वह इस नतीजेपर पहुँची थी कि वह इसके लिए जिम्मेदार नहीं है। लेकिन क्योंकि करीब तीन साल पहले उसने एक अनुदानकी घोषणा की थी जो अभीतक दिया नहीं गया है, हालाँकि उसकी आशापर पैसा खर्च कर दिया गया है, इसलिए एक नये अनुदानकी स्वीकृति दी गई। शायद यह कुछ महीनोंके लिए पर्याप्त होगा। जहाँतक भविष्यका सवाल है, जाहिर है कि कार्य-समिति मकान और उसकी खाली जमीनकी देखभाल का बोझ उठानेके लिए उत्सुक नहीं थी। यह बोझ, टैक्स आदि मिलाकर, १०० रुपये प्रति मासका है। मैं समझता हूँ कि ट्रस्टी भी इस बोझसे कुछ डरे हुए थे और उन्होंने यह सुझाव दिया कि मकानकी देखभालके खर्चके लिए उसके कुछ हिस्से, जैसाकि आम तरीका है, किराये पर चढ़ा दिये जायें। दूसरा सुझाव था कि इसके लिए खाली जमीनके एक हिस्सेको बेच दिया जाये। मुझे इन सुझावोंको जानकर आश्चर्य हुआ, क्योंकि मुझे इनमें से कुछ तो ट्रस्टनामे से अक्षरशः और सब-के-सब उसकी भावनासे विपरीत लगे। एक ट्रस्टीकी हैसियतसे इस विषयमें मेरा सिर्फ एक मत है। लेकिन मैं यह कहना चाहूँगा कि ट्रस्टकी सम्पत्तिके ऐसे किसी भी दुरुपयोगपर मुझे इतनी जबरदस्त आपत्ति है जितनी कि हो सकती है। मेरे पिताकी इच्छाओंका इस तरहसे निरादर हो, इस बातकी कल्पना ही मेरे लिए असह्य है। ट्रस्ट केवल उनकी इच्छाओंका प्रतीक ही नहीं बल्कि कुछ अंश तक उनका स्मारक भी है, और उनकी इच्छाएँ और उनका स्मारक मेरे लिए एक सौ रुपये माहवारसे कहीं अधिक मूल्यवान हैं। इसलिए मैं कार्य-समिति और ट्रस्टियोंको

Scanned by CamScanner

आश्वासन देना चाहूँगा कि उन्हें इस सम्पत्तिकी देखभालके लिए आवश्यक पैसेकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। कार्य-समितिने कुछ महीनोंके लिए जो अनुदान दिया है, उसके खत्म होते ही देखभालकी जिम्मेदारी मैं स्वयं व्यक्तिगत रूपसे ले लूँगा, कार्य-समितिको और अनुदान देनेकी कोई आवश्यकता नहीं रहेगी। मैं ट्रस्टियोंसे यह भी प्रार्थना करूँगा कि वे इस विषयमें मेरी भावनाओंकी कद्र करें और इस सम्पत्तिका क्षय न होने दें तथा इसे किरायेपर चढ़ानेके लिए किरायेपर न लें। जबतक स्वराज भवन सम्पत्तिका सदुपयोग होता रहेगा, मैं इसकी देखभाल करते रहनेका प्रयास करूँगा।

मेरे पास आँकड़े तो नहीं हैं, लेकिन मेरा विश्वास है कि स्वराज भवन वैसे भी अभीतक कार्य-समितिके लिए किसी भी अर्थमें आर्थिक बोझ नहीं रहा है। जो अनुदान इसे दिये गये हैं, वे उस स्थानके यथोचित किरायेसे जिसमें अ० भा० कां० क०का कार्यालय है, शायद बहुत अधिक नहीं हैं। इस किरायेको छोटा और सस्ता स्थान लेकर घटाया जा सकता था। पर अ० भा० कां० क० पहले केवल मद्रासमें ही एक ऊपरी मंजिलके लिए १५० रुपये प्रतिमास किराया दे चुकी है।

शायद इस पत्रके कुछ अंश आपके लिए कष्टकर हों। परन्तु आप यह भी नहीं चाहेंगे कि मैं आपसे अपने हृदयकी बात छिपाऊँ।

सस्नेह,
जवाहर

[पुनश्चः]

अलीपुर जेलमें मुझे आपकी संक्षिप्त टिप्पणी मिली थी और मैंने उसका जवाब भी भेज दिया था। लेकिन सुपरिंटेंडेंटने उसे दबा लिया।

[अंग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० ११२-१७

Scanned by CamScanner

३२४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१४ अगस्त, १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

यद्यपि परिस्थिति ऐसी संकटपूर्ण नहीं है, फिर भी तुम्हारी रिहाईसे[1] मेरे मन का बड़ा बोझ उतर गया है, क्योंकि कमलाकी तीन-चौथाई बीमारीकी दवा तो इसीसे हो जायेगी। मैंने जितने भी महत्वपूर्ण कदम उठाये, उन सबमें तुम्हारी अनुपस्थिति बहुत महसूस की। लेकिन उनके बारेमें मिलनेपर बात होगी।

मैं ठीक हूँ, हालाँकि अन्तिम दिन सब दिनोंसे ज्यादा कष्टप्रद साबित हुआ और उसने मुझे पूरी तरह तोड़ दिया। लेकिन मुझे कोई सन्देह नहीं कि मैं जल्दी ही फिर ताकत हासिल कर लूंगा।

खैर, यह पत्र तुम्हें यह सुझाव देनेके विचारसे लिख रहा हूँ कि कोई सार्वजनिक राजनीतिक घोषणा तुम्हें नहीं करनी चाहिए। मैंने महसूस किया है कि घरमें कोई बीमारी या दुःख आ पड़नेपर सरकारने शिष्ट ढंगका बर्ताव किया है। इसलिए मुझे यह जरूरी लगता है कि हम इस तरहकी प्राप्त आजादीका किसी अन्य ऐसे उद्देश्यके लिए उपयोग न करें जो सरकारकी नीतिसे संगति न रखता हो। हम सरकारके शिष्ट बर्त्तावको इसी तरह स्वीकार करें। मुझे लगता है कि यह सरकार के प्रति और स्वयं अपने प्रति हमारी देनदारी है, खासकर उस समय जब सत्याग्रह मुल्तवी है। यदि मेरी दलील तुम्हारी विवेक-बुद्धिको जँचती है, तो तुम अपने आत्मसंयमको सही ढंगसे प्रकट करोगे। मैं आशा करता हूँ कि तुम कमलाका हाल बेहतर हो जानेपर यहाँ आओगे। मैं महीनेके अन्ततक वर्धा रहूँगा, सिवाय इसके कि शायद मुझे जमनालालजी के नाजुक ऑपरेशनमें महीनेके बीचमें ही बम्बई जाना पड़े।

आशा है कि माँ और कृष्णा ठीक चल रही हैं। मुझे लिखना कि इस बार तुम जेलमें कैसे रहे।

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३४; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१. एक बिलकुल ऐसा ही तार (सी० डब्ल्यू० ७९६८) घनश्यामदास बिड़लाको भी इसी दिन बिड़ला मिल्स, दिल्लीके पतेपर भेजा गया था।

२. जवाहरलालजी ने तार द्वारा गांधीजी को सूचित किया था : "मुझे कमलाके साथ रहनेकी इजाजत दे दी गई है। स्थिति साफ नहीं है। आशा है कि आप ठीक हैं।"

Scanned by CamScanner

३३९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१७ अगस्त, १९३४

दुबारा नहीं पढ़ा

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा भावपूर्ण और मर्मस्पर्शी पत्र मिला।[१] उसका उत्तर मेरी सामर्थ्यसे कहीं अधिक लम्बा होना चाहिए।

मुझे सरकारसे अधिक शराफतकी आशा थी। किन्तु तुम्हारे मौजूद रहनेने कमला के लिए और साथ ही मामाके लिए जो काम किया वह किसी दवा या डॉक्टरसे नहीं हो सकता था। मुझे आशा है कि जितने थोड़े दिनोंकी अपेक्षा है तुम वहाँ उससे अधिक ठहरने दिये जाओगे।

तुम्हारे गहरे दुःखको मैं समझता हूँ। अपनी भावनाओंको पूरी तरह और आजादीके साथ प्रकट करके तुमने बिलकुल ठीक किया है। परन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि जो बात मैंने हमारे सामान्य दृष्टिकोणसे लिखी है उसे अधिक बारीकीसे पढ़नेपर तुम्हें पता चल जायेगा कि तुमने जो इतने दुःख और निराशाका अनुभव किया है, उसके लिए काफी कारण नहीं है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि तुमने मेरा साथ नहीं खोया है। मैं तुम्हारा वैसा ही सहयोगी हूँ जैसा तुम मुझे १९१७ में और उसके बादसे जानते हो। मुझमें वही लगन है जो कि सामान्य लक्ष्यके लिए तुमने मुझमें पाई थी। मुझे देशके लिए पूरे अर्थमें सम्पूर्ण स्वाधीनता चाहिए और वे सारे प्रस्ताव, जिनसे तुम्हें पीड़ा हुई है, उसी लक्ष्यको ध्यानमें रखकर तैयार किये गये हैं। उन प्रस्तावों और उनकी सारी कल्पनाकी पूरी जिम्मेदारी मेरी है।

मेरी समझमें मुझमें समयकी नाड़ीको पहचान लेनेका माद्दा सधा है। ये प्रस्ताव उसीके परिणाम हैं। अलबत्ता तरीके या साधनपर हमारे जोर देनेमें अन्तर है। मेरे लिए साधन उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितना लक्ष्य; बल्कि एक तरहसे साधन अधिक महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि उनपर तो हम कुछ नियन्त्रण रख सकते हैं। अगर साधनों पर हमारा काबू न रहे तो लक्ष्यपर वह बिलकुल ही नहीं रह जायेगा!

'विचारहीन बातों' के बारेमें प्रस्तावको निर्विकार होकर जरूर पढ़ो। समाजवादके विषयमें उसमें एक भी शब्द नहीं है। समाजवादियोंका अधिकसे-अधिक लिहाज रखा गया है, क्योंकि उनमें से कुछके साथ मेरा घनिष्ठ परिचय है। क्या मैं उनके त्यागको नहीं जानता? मगर मैंने देखा है कि वे सबके-सब अधीर हैं। क्यों न हों? बात इतनी ही है कि यदि मैं उनकी तरह तेज नहीं चल सकता तो मुझे उनसे कहना

१. १३ अगस्तका; देखिए परिशिष्ट–५।

Scanned by CamScanner

पड़ता है कि ठहरो और मुझे अपने साथ ले चलो। अक्षरशः मेरा यही रवैया है। मैंने शब्दकोशमें समाजवादका अर्थ देखा है। परिभाषा पढ़नेसे पहले जहाँ मैं था, पढ़नेके बाद उससे आगे नहीं पहुँच सका। तुम बताओ, पूरा अर्थ जाननेके लिए मुझे क्या पढ़ना चाहिए? मैंने मसानी[1] की दी हुई पुस्तकोंमें से एक पुस्तक पढ़ी है और अब मैं अपना सारा फाजिल समय नरेन्द्रदेवकी सिफारिश की हुई पुस्तक पढ़नेमें लगा रहा हूँ।

तुम कार्य-समितिके सदस्योंके प्रति कठोरता दिखा रहे हो। वे जैसे भी हैं, हमारे साथी हैं। आखिर हमारी संस्था एक स्वतन्त्र संस्था है। यदि वे विश्वासपात्र नहीं हैं तो उन्हें हटा देना चाहिए। परन्तु जो कष्ट कुछ दूसरे लोग सह चुके हैं, उन्हें वे न सह सकें तो इसके लिए उन्हें दोष देना अनुचित है।

विस्फोटके बाद हम रचना चाहते हैं। कदाचित् हमारा मिलना न हो, इसलिए अब मुझे ठीक-ठीक बता दो कि तुम मुझसे क्या कराना चाहते हो और तुम्हारे खयालसे तुम्हारे विचारोंका सबसे अच्छा प्रतिनिधि कौन होगा।

न्यास[2] के विषयमें बात यह है कि मैं तो उपस्थित नहीं था। वल्लभभाई थे। तुम्हारे रुखसे क्रोध प्रकट होता है। तुम्हें ट्रस्टियोंपर विश्वास रखना चाहिए कि वे अपना फर्ज अदा करेंगे। मैं नहीं समझता कि कोई बेजा बात हुई। मैं इतना व्यस्त था कि उसपर पूरा ध्यान नहीं दे सका। अब मैं कागजात और हर चीजका अध्ययन करूँगा। बेशक तुम्हारी भावनाओंका आदर दूसरे न्यासी पूरी तरह करेंगे। यह आश्वासन देनेके बाद मैं तुमसे कहूँगा कि इस मामलेको इस प्रकार व्यक्तिगत न समझो जैसा तुमने समझा है। यह तुम्हारे उदार स्वभावके अधिक योग्य होगा कि पिताजी की स्मृतिके लिए जितना लिहाज तुमको है, उतना ही अपने साथी ट्रस्टियोंको होनेका श्रेय दे सको। पिताजी की स्मृतिका संरक्षक राष्ट्रको बना दो और तुम राष्ट्रके एक अंग बन जाओ।

आशा है, इन्दु अच्छी तरह होगी और उसे अपना नया जीवन पसन्द आ रहा होगा। कृष्णाका क्या हाल है?

सस्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३४; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। **ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स**, पृ० ११७-१९ भी।

१. एम० आर० मसानी; तात्पर्य शायद **व्हाट मार्क्स रियली मेन्ट** से है; देखिए पृ० ३३३।
२. आनन्द भवनका न्यास।

Scanned by CamScanner

५२४. पत्र : सम्पूर्णानन्दको

२७ जुलाई, १९३७

भाई सम्पूर्णानन्द,

आपकी पुस्तक[1] मैं तीथल ले गया था। वहीं पढ़नेका आरंभ कर दिया था। गत शनिवार ता० २४-७-३७ को वह खतम की। थोड़े भी मिनिट मिल जाते थे तो पढ़ लेता था। ध्यानसे 'अर्थ' से 'इति' तक पढ़ गया हूँ। मुझको पुस्तक अच्छी

१. मूलमें यह गुजराती में है, जिसका अनुवाद इस प्रकार है: "वे मेरे लिए यह प्रार्थना भले करें कि मुझमें [उनके प्रति] पुन: वैसा ही प्रेम पैदा हो जैसा माँके लिए होता है। अभी तो मेरे मनमें उनके प्रति ऐसा भाव नहीं है। आश्रम की अन्य बहनोंके प्रति जो प्रेम-भाव है उससे अधिक उनके प्रति नहीं है।"

२. देखिए "पत्र: कान्तिलाल गांधीको", पृ० ४६०-१।

३. समाजवाद।

Scanned by CamScanner

लगी। भाषा भी मधुर है। जो संस्कृत बिलकुल नहीं जानते हैं उनके लिये कुछ कठिन भी मानी जाय, अन्तमें हिन्दी अंग्रेजी और अंग्रेजी हिन्दी शब्दकोष दिया है वह अभ्यासीके लिये उपयोगी है। बगैर किसीकी निन्दा किये समाजवादके पक्षमें जो कुछ लिखा गया है वह स्तुत्य है।

समाजवादके जो सिद्धान्तोंका निरुपण पुस्तकमें किया गया है करीब करीब उन सबको स्वीकार करनेमें मुझको कोई आपत्ति नहीं है। जयप्रकाशकी पुस्तक[1] भी मैं ध्यानसे पढ़ गया हूँ। आपके और उसके निरुपणमें कुछ भेद हो सकता है क्या? हिन्दोस्तानके अंतमें क्रांति कैसे होगी उसका स्पष्टीकरण मैंने न आपकी पुस्तकमें पाया है न जयप्रकाशकीमें। बहोतोंसे भी बात करनेसे मुझे पता नहीं चला। परसों मेरे हाथमें मेहरअलीने मद्रासमें जो एक भाषण दिया है आया। उसे मैंने पढ़ लिया है।[2] उसमें समाजवादी क्या कर रहे हैं वह ठीक तौरसे बताया गया है। उसका मतलब यह है कि हर जगह ये बलवा पैदा कर देना। ऐसे तो बगैर हिंसाके हो ही नहीं सक्ता है। आपके पुस्तकमें मैंने ऐसा कुछ नहीं पाया है। शांतिसे अर्थात् शान्त कानून भंगसे, शांत असहयोगसे जैसा कि हम सन् १९२० से करते आए हैं—उससे हम शक्ति पैदा कर सक्ते हैं कि नहीं?

आपने लिखा है समाजवादके सिद्धान्तोंका पूर्णतया अमल जब तक राज्याधिकार प्राप्त नहीं हुवा तब तक नहीं हो सक्ता है। माना कि कोई बड़ा जमीनदार पूर्णतया समाजवादी हो जाता है तो वह अपने सिद्धान्तोंका पूर्णतया अमल कर सक्ता है? कहा जाय कि उसके हाथमें दण्ड नहीं है तो कोई हिन्दी राजा समाजवादी बन जाय तो पूरा अमल हो सकेगा? मुझे ऐसे स्मरण है कि आपने लिखा है कि जब तक सारा जगत समाजवादी न बने तब तक समाजवादका संपूर्ण अमल नहीं हो सक्ता है। इसका यह मतलब है कि यदि हमें पूर्ण स्वाधीनता हासिल हो तब भी समाजवादका पूर्ण या करीब करीब पूर्ण अमल नहीं हो सकेगा। शायद मेरा मतलब आप समझ गए हैं। इस प्रश्न पूछनेका हेतु इतना ही है कि समाजवादी सिद्धान्त और इसके अमलके जो साधन हैं उनको मैं कहां तक स्वीकार कर सकता हूँ सो जानुं।

इस पत्रका यथावकाश भेजियेगा। मुझे कोई जल्दी नहीं।

आपका,
मो० क० गांधी

सी० डब्ल्यू० ९९४० से; सौजन्य: काशी विद्यापीठ

१. व्हाई सोशलिज्म।
२. देखिए "पत्र: महादेव देसाईको", पृ० ४७५ और "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", पृ० ४८१-२ भी।

२३८. प्रश्नोत्तर : गांधी सेवा संघकी बैठक, वृन्दावनमें – १

५ मई, १९३९

अन्नदा नावूकी तरफसे ये प्रश्न आये हैं। वे कहते हैं कि ये प्रश्न मैं अपने लिए नहीं पूछ रहा हूँ। दूसरोंके लिए पूछता हूँ।

प्रश्न : आपने सुभाष बाबूके चुनावके बाद जो वक्तव्य[1] निकाला उससे परिस्थिति कुछ बदल गई। आपने चुनावके समय कोई वक्तव्य क्यों नहीं निकाला? कुछ लोगोंका खयाल है कि चुनावके वक्त यदि आप वक्तव्य निकाल देते तो आजकी परिस्थिति ही पैदा नहीं होती।

उत्तर : मैंने कोई वक्तव्य नहीं निकाला यह सही है। अन्नदा बाबू कहते हैं कि इसके कारण स्थिति बदल गई। उनका मतलब यह है कि मैं पहले वक्तव्य निकालता तो जो बन गया वह न बना होता। फिर भी सरदार वल्लभभाई इत्यादिके नामसे जो वक्तव्य निकला उसमें एक छोटा-सा वाक्य था, जिससे मालूम होता था कि उसमें मैं भी हूँ। इससे आगे बढ़ूँ ऐसी कोई बात उस वक्त नहीं थी। वक्तव्य निकालने की आवश्यकता मैंने उस वक्त महसूस नहीं की थी।

१. देखिए खण्ड ६८, पृ० ३९६-७।

Scanned by CamScanner

बादमें वक्तव्य निकालने की आवश्यकता हुई। उसका लम्बा इतिहास है। उसमें मैं नहीं जाऊँगा। इसमें कोई आलस्यकी बात नहीं थी। न मुल्कको समझाने में कोई गलती की थी। मेरे दिलमें जो चीज थी वह मैंने सुभाष बाबूतक पहुँचा दी थी। मेरा काम करने का तरीका ही यह है। अन्तमें इतना ही रह जाता है कि उसके कारण कोई गलत-समझी भी हो जाये तो मैं सहन कर लूं। इसके विषयमें कोई और कुछ पूछना चाहते हैं तो पूछ सकते हैं।

कुछ लोगोंका खयाल है कि पंतजी का प्रस्ताव आपको पसन्द नहीं था। जब आपने पहले-पहल उस प्रस्तावके विषयमें सुना तो आपके दिलपर क्या असर हुआ? आपने सुभाष बाबूको ऐसा क्यों लिखा कि 'पंतके प्रस्ताव के विषयमें ज्यों-ज्यों सोचता हूँ त्यों-त्यों उसे अधिक नापसन्द करता हूँ'? कृपया इसे समझाइए।

पहली बात तो यह है कि आप यह जानते हैं कि उस वक्त मैं तो बिछौनेपर पड़ा था। मेरे काम करने का तरीका ऐसा नहीं कि जिस चीजमें मैं नहीं हूँ उसमें मैं पड़ूं। इसलिए त्रिपुरीमें क्या हो रहा है इसके विषयमें मैं बिलकुल उदासीन था। यहाँतक कि मैं उन दिनों अखबार भी नहीं पढ़ता था। मेरे मनमें तो राजकोट-ही-राजकोट भरा था। किसीने मुझसे कहा कि पंतजी का ऐसा कोई प्रस्ताव त्रिपुरीमें आनेवाला है। उस वक्त मुझे इतना ही खयाल हुआ कि पुरानी कार्य-समितिमें विश्वास प्रकट करनेवाला प्रस्ताव है। मैंने कहा कि विश्वास प्रकट करने की बात तो ठीक है। लेकिन मैं होता तो और कुछ करता। मैंने तो वर्धामें ही कहा था कि अगर हिम्मत है तो सुभाष बाबूके ऊपर अविश्वासका प्रस्ताव लाओ। यह सीधा तरीका है। अगर कांग्रेसके प्रतिनिधि यह समझते थे कि सुभाष बाबूको चुनने में उन्होंने गलती की तो उनके लिए यही सभ्यताका रास्ता था। लेकिन उस वक्त ऐसी आबोहवा शायद नहीं थी। मेरा तो यह खयाल हो गया कि सुभाष बाबू अपनी कार्य-समिति बना लेंगे। लेकिन वह नहीं बना। तब पंतका प्रस्ताव त्रिपुरीमें आया। मैंने इतना ही सुना कि जो लोग निकल गये हैं उनके लिए उसमें विश्वास प्रकट किया गया है। मैंने कहा इतना ही है तो ठीक है। लेकिन वह मेरी चीज तो नहीं थी। बादमें मैंने वह प्रस्ताव देखा। फिर सुभाष बाबूके साथ पत्र-व्यवहार चला। अन्नदा बाबूने जिस खतका जिक्र किया है वह आपके सामने नहीं है। जब मैंने पंतका प्रस्ताव पढ़ा तो देखा कि उसमें तो कहा गया है कि मुझे सुभाष बाबूको रास्ता दिखाना है। जब वह चीज मेरे पास आ गई तो मुझे बहुत नापसन्द लगी। यहाँतक नापसन्द लगी कि मैंने वैसा करने से इन्कार किया। और उसी इन्कारपर आखिरी दमतक कायम रहा। हो सकता है कि इसके कारण कुछ गलतफहमी पैदा हो जाये। तो उसे भी मुझे सहना है। जिस चीजको मैं गलत समझता हूँ उसे मैं कैसे करूँ? मैंने उनसे कहा कि आप अपने मनकी कमेटी बना लें और अपना कार्यक्रम बनाकर काम शुरू कर दें। मेरी चले तो मैं आबोहवा साफ कर दूंगा। नहीं तो काम चलता रहेगा और धीरे-धीरे आबोहवाको पहुँच जायेंगे। इसीलिए कलकत्तेमें जब मुझसे कहा गया कि मैं कमेटीके नाम सुझाऊँ तो मुझे यह

Scanned by CamScanner

बात कुछ विपरीत लगी। वहाँ मेरे पास वह सामान था जिससे मुझे ऐसा करना गलत मालूम हुआ। त्रिपुरीमें वह सामान किसीके पास नहीं था। आगे पत्र-व्यवहारसे मेरी यह राय और भी पक्की हुई। पीछे वैमनस्यकी बात भी मेरे पास आ गई। ऐसी स्थितिमें मैं नाम कैसे दे सकता था? वह तो सुभाष बाबूपर जबरदस्ती होती। मैं सुभाष बाबूपर जबरदस्ती करूँ तो क्या राष्ट्रका जहाज चल सकता है? यह तो जहाज डुबाने की बात है। मैंने कहा कि मैं ऐसा नहीं करूँगा। अगर आप पुरानी कार्य-समितिके लोगोंको चाहते हैं तो आपसमें मशवरा कर लें। आपको वे लोग चाहें तो दोनों साथ काम कर सकते हैं। लेकिन मुझसे यह काम नहीं होगा कि मैं सुभाष बाबूपर कुछ नाम लाद दूं। जितना मैं उस प्रस्तावपर सोचूं वह मुझे नापसन्द आता है। उसके अनुसार मैं राष्ट्रकी सेवा नहीं कर सकता। कोई कितना भी कहे मैं तो यही कहूँगा कि कार्य-समितिके नाम नहीं दे सकता। मैं जो-कुछ पसन्द करूँ वह सुभाष बाबूपर बलात्कार होगा। और बलात्कार तो हिंसा है। वह मैं कैसे करूँ? पंतके प्रस्तावका मेरे दिलपर क्या असर हुआ वह मैंने बतला दिया। अगर लोग समझते हैं कि मैंने देशकी काफी सेवा की है तो भी किसीपर बलात्कार करने का अधिकार मुझे थोड़े ही आ गया है।

जब सुभाष बाबू आपके दिये हुए कोई भी नाम मंजूर करने के लिए तैयार थे तो नाम देने में आपको क्या आपत्ति थी?

इस सवालका यह मतलब है कि "त्रिपुरीने पंत-प्रस्तावसे तुम्हें एक हुक्म दिया और सुभाष बाबूको भी दिया। सुभाष बाबू तो वह हुक्म मानने के लिए तैयार थे लेकिन तुमने उसका विरोध क्यों किया? हुक्मके अनुसार कार्य-समितिके नाम देने में कौन-सा बलात्कार था?" यह तर्क देखने में बड़ा मोहक है। लेकिन गलत है। कल कोई आदमी मुझसे कहे कि तुमको हुक्म हुआ कि मुझे गालियाँ दे दो और बेंत मारो तो क्या मैं उसे मनमानी गालियाँ दे दूं और तड़ातड़ बेंत मार दूं? जब सुभाष बाबूके और मेरे बीच इतना फासला था तो इस अधिकारके जोर पर उनपर कोई नाम लाद देना क्या सभ्यताका काम होता? अधिकार मिलने का मतलब यह थोड़ा ही है कि मुझे अपनी विवेक-बुद्धिके खिलाफ उसपर अमल करना ही चाहिए। मेरे साथ कोई ऐसा करे तो मैं पसन्द नहीं करूँगा। मान लीजिए कि कल मुझे सबको गाली देने का अधिकार मिल गया। लेकिन क्या उसपर अमल करना मेरा धर्म हो सकता है? अधिकार और धर्ममें भेद है। अधिकारका उपयोग करना धर्मपर निर्भर है। धर्म-पालन मेरा कर्त्तव्य है। मैं केवल अपने व्यक्तिगत महत्त्वको नहीं देखता। मेरे नजदीक उसकी कोई कीमत नहीं। मैं राष्ट्रकी दृष्टिसे विचार करता हूँ। मुझे मेरा जो कर्त्तव्य लगता है वह मैं करता हूँ।

सुभाष बाबूसे आपका जो पत्र-व्यवहार हुआ, क्या वह प्रकाशित नहीं हो सकता? अगर नहीं, तो कृपया बतलाइए कि क्यों?

पहले तो उस पत्र-व्यवहारको प्रकट करना तय हो गया था। बादमें जवाहरलालजी आ गये और यह तय हुआ कि उसे रोक लें। यह भी तय हुआ कि मैं

Scanned by CamScanner

भी कोई वक्तव्य नहीं निकालूं। वह मुल्कके लिए अच्छा नहीं होगा। मैंने इसमें यही नीति अख्तियार की है कि सुभाष बाबूको जो सुभीतेका हो वही वे करें। अगर हम अहिंसक हैं तो हमें ऐसा ही करना चाहिए। किसी पत्र-व्यवहारको प्रकट करना हमारा काम नहीं है। हम जबतक रोक सकते हैं, रोकें। जब कोई आदमी खतमें लिखता है उसके विपरीत काम करे तभी उसे प्रकट करना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है। ऐसी कोई बात यहाँ नहीं आती। इसलिए यह मैंने सुभाष बाबूपर छोड़ दिया है। पत्र-व्यवहार प्रकट न होने से अगर कोई गलतफहमी होती है तो कोई खास नुकसान नहीं है। सामनेवाला आदमी जब जरूरी समझेगा तब प्रकट कर देगा। अगर वह सब पुराना इतिहास बन गया तो छोड़ दिया जायेगा।

अब शंकररावके दो प्रश्न लेता हूँ। उनमें से दूसरा प्रश्न इसीसे संबंध रखता है। इसलिए उसे पहले लेता हूँ।

आपने सुभाष बाबूको एक पत्रमें लिखा है कि आपके और उनके बीच बुनियादी मतभेद हैं। वह कौन-सा?

मेरे और उनके बीचमें जो पत्र-व्यवहार हुआ उसका मैं उल्लेख नहीं करूँ वही अच्छा है। बात लम्बी हो जायेगी। थोड़ेमें समझा दूँ। उन्होंने जलपाईगुड़ीमें जो प्रस्ताव किया[1] वैसी आज भी उनकी राय है ऐसा मैं समझता हूँ। उसमें मैंने देखा कि मैं कहीं शामिल नहीं हो सकता। उसमें सरकारको अन्तिम सूचना (अल्टिमेटम) देने की बात है। वे मानते हैं कि हमारे पास लड़ाईका सामान मौजूद है। मैं बिलकुल उलटा मानता हूँ। आज हमारे पास लड़ाई करने का कोई सामान है ही नहीं। आज सारा वायुमण्डल हिंसासे इतना भरा हुआ है कि मैं लड़ाई कर ही नहीं सकता। उड़ीसामें रानपुर और कर्नाटकमें रामदुर्गका मामला कैसे बना? कानपुरमें पंतजी अपना काबू नहीं रख सके। लखनऊके शिया और सुन्नी मुसलमानों पर हमारा कोई काबू नहीं। जातीय झगड़ोंका तो कोई ठिकाना नहीं रह गया है। मुट्ठी-भर कांग्रेसवालों पर हमारा काबू रहने से हमारा काम नहीं चलेगा। हमारा तो हमेशा यह दावा रहा है कि सारे मुल्कपर हमारा काबू है। लेकिन आज मुट्ठी-भर लोगोंपर हमारा काबू रह गया है। मजदूर और किसान तो कांग्रेसवाले ही माने जाते थे। किसानोंपर बिहारमें हमारा पहले जो काबू था वह आज नहीं रहा। क्या यह लड़ाईके लिए अनुकूल स्थिति है? क्या कांग्रेसके काममें और अहिंसावादियोंके काममें फर्क है? आज मुझसे कोई कहे कि तुम 'दाँडीकूच' करो तो मुझमें हिम्मत नहीं है। मजदूर और किसानोंको छोड़कर हम कैसे काम कर सकते हैं? उन्हींका तो मुल्क है। सरकारको अन्तिम सूचना देने का सामान मेरे पास नहीं है। ऐसी सूचनासे देशकी हँसी ही होगी। लेकिन सुभाष बाबू समझते हैं कि हम लड़ाईके लिए तैयार हैं। यह मतभेद बहुत बड़ा और बुनियादी है।

१. **हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस,** जिल्द २, पृ० १०६ पर पट्टाभि सीतारामय्या बताते हैं: "जलपाईगुड़ीमें बंगालके प्रतिनिधियोंने मिलकर [एक] प्रस्ताव पास करके कहा कि ब्रिटिश सरकारको छह महीनेका नोटिस दिया जाये और सामूहिक [सविनय] अवज्ञा आरम्भ की जाये।"

Scanned by CamScanner

लड़ाईके सामानकी उनकी कल्पना और मेरी कल्पनामें भेद है। सत्याग्रहकी मेरी जो कल्पना है वह उनकी नहीं है। क्या यह मतभेद बुनियादी नहीं है? मैं ये सब बातें आज ही अखबारोंमें नहीं दे सकता। क्योंकि उससे कोई फायदा नहीं है। मौका आने पर लिखूंगा। यह तो बुनियादी मतभेद की बात है। हमारे खतोंमें भी यह बात आई है। एक मोटी-सी चीज आपके सामने रख दी है। इससे व्यक्तिगत मतभेदका कोई सम्बन्ध नहीं है।

इसी तरह कांग्रेसकी अशुद्धिकी बात है। उसमें मेरा और उनका मात्रा (डिग्री) का भेद है। अशुद्धि है यह तो वे भी कबूल करते हैं। पर वे मानते हैं कि वह इतनी नहीं कि जिससे डरने की जरूरत हो। लेकिन मैं मानता हूँ कि जबतक यह अशुद्धि रहेगी हम कोई काम नहीं कर सकेंगे। मेरे नजदीक सविनय भंग और अधिकार-स्वीकारमें भेद नहीं है। दोनों सत्याग्रही लड़ाईके ही अंग हैं। इस तरह मेरा और उनका दृष्टिकोण और अवलोकन अलग-अलग है। सत्याग्रहका मेरा जो अर्थ है वह उनका नहीं है। इसलिए कभी-कभी मात्रा (डिग्री) का भेद भी बुनियादी हो जाता है। मैं तो यहाँतक अधीर हो गया हूँ कि अशुद्धि दूर करने के लिए कांग्रेसको ही दफन कर देना पड़े तो कर देना चाहिए। एक हिंसावादी संस्था जिन बातोंको दरगुजर कर सकती है उन्हें अहिंसावादी संस्था नहीं कर सकती। हिंसक-युद्धका दृष्टान्त यहाँपर लागू नहीं पड़ता। अब आप समझ गये होंगे कि बुनियादी मतभेदसे मेरा क्या मतलब है।

क्या समाजवाद और जवाहरलालजी से आपका मतभेद बुनियादी नहीं है? क्या उनके प्रति भी आपका यही रुख रहेगा?

नहीं। समाजवादियोंसे मेरा मतभेद दूसरी तरहका है। इन दोनोंको मिलाइये नहीं। सरकारको अन्तिम सूचना देने की बातपर उनका भी सुभाष बाबूसे मतभेद है। मुझे पता नहीं इसमें उनके साथ कौन-कौन है? इसलिए समाजवादियोंसे बुनियादी और तीव्र मतभेद होते हुए भी उनके बारेमें मेरे विचार दूसरे हैं। और फिर, समाजवाद और जवाहरलालको हम एक ही वर्गमें रख भी नहीं सकते। जवाहरलाल किसी समाजवादी गिरोहमें अपना नाम नहीं देते। उनका समाजवादमें विश्वास है। वे समाजवादियोंके साथ बैठते-उठते हैं, मशविरा कर लेते हैं। पर उनके काम करने के तरीकेमें काफी भेद पड़ा है। समाजवादियोंमें और मुझमें जो मतभेद है वह मशहूर ही है। मैं मनुष्यके हृदय-परिवर्तनमें और उसके लिए कोशिश करने में विश्वास करता हूँ। वे नहीं करते। वे चरखेकी हँसी उड़ाते हैं। परन्तु फिर भी समाजवादी हर दिन मेरी तरफ बढ़ रहे हैं। या, चाहें यों कह लीजिए कि मैं उनके पास जा रहा हूँ। या यों कहिए कि हम एक-दूसरेकी तरफ बढ़ रहे हैं। मुझे पता नहीं यह कबतक चलेगा। शायद एक दिन हम दोनोंका रास्ता अलग-अलग हो जाये। सुभाष बाबूके साथ ऐसा ही हुआ। जलपाईगुड़ीके प्रस्तावने हमारा मतभेद स्पष्ट कर दिया। जवाहरलाल और मुझमें मतभेद हैं तो सही। लेकिन वह नहीं-सा है। उनके बिना मैं अपनेको अपंग-सा महसूस करता हूँ। वे भी

Scanned by CamScanner

कुछ ऐसा अनुभव करते हैं। मेरा और उनका हृदय एक है। हमारा यह घनिष्ट सम्बन्ध राजकारणसे ही शुरू नहीं होता। वह उससे बहुत पुराना और गहरा है। उस बातको हम छोड़ दें।

अब यह गंगाधररावका प्रश्न है।

समाजवादी लोगोंका हम लोगोंपर यह आरोप है कि आप सहिष्णु और उदार हैं और हम असहिष्णु और अनुदार हैं। उदाहरणार्थ, आप उन्हें वर्किंग कमेटी में लेने को तैयार होंगे पर हम नहीं। इसकी क्या वजह है?

यह मैं क्या जानूं? इसका मैं क्या जवाब दूं? इसका कारण आप अपने अन्दर खोजिए। मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि इसमें आप मेरा अनुकरण करें। मैं जैसी मीठी जबान रखता हूँ, आप भी रखें। समाजवादी मेरे पास चले आते हैं तो बड़े चिढ़कर आते हैं। लेकिन मेरे पाससे लौटते हैं तब हँसते हुए जाते हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि मैं अपना मतभेद उनके सामने प्रकट नहीं करता। मैं तो अपने दिलकी बात उनके सामने साफ-साफ कह देता हूँ। मैं कुछ उनकी खुशामद नहीं करता। लेकिन उनके हृदयमें प्रवेश करने की कोशिश करता हूँ। उनकी सचाईमें विश्वास रखता हूँ। उनका दृष्टिकोण समझ लेने का प्रयत्न करता हूँ। उनसे बात करने के लिए समय निकाल लेता हूँ। आप भी उनसे ऐसा ही सभ्यताका व्यवहार करें। इतनी मदद मैं आपकी कर सकता हूँ।

अब एक प्रश्न यह रह जाता है। लेकिन वह बड़ी चीज है। बाकीकी तो क्षणिक चीजें हैं। आप गांधी सेवा संघमें पड़े हैं। मैं उसका विधान देख गया। उसमें बहुत-सी बातें भरी पड़ी हैं। आप चन्द सिद्धान्तोंको मानते हैं। अन्नदाके दिलमें जो प्रश्न पैदा हुआ वह कांग्रेसके प्लेटफॉर्मपर पैदा होता तो दूसरी बात थी। पर जब संघके प्लेटफॉर्मपर होता है तब मुझे आघात-सा होता है। आप लोगोंके दिलोंमें ऐसी शंका क्यों हो? मेरे और सुभाष बाबूके बीचमें जो मतभेद है वह क्षणिक है। परन्तु उनके और मेरे बीचमें वैमनस्य आ जाये तो मुल्कका नाश हो जायेगा।

मतभेदसे वैमनस्य कभी भी पैदा नहीं होना चाहिए। आप सर्वधर्म-समानतामें मानते हैं। मैं आपसे कहता हूँ कि आप सर्वधर्म-समानताकी व्याख्याको जरा विस्तृत कर दें। नरम-दल और गरम-दलको भी उसमें शामिल कर लें। हमें तो नरम-दल और गरम-दलमें भी समानता देखनी है। जो अपने-आपको गरम-दलवाले मानते हैं उनके प्रति भी हमारे दिलमें आदर रहना चाहिए। गरम-दलवालेके धर्मको उसकी दृष्टिसे देखना चाहिए और नरम-दलवालेको उसकी दृष्टिसे। हमें अपना धर्म अपनी दृष्टिसे देखना चाहिए और दूसरोंका दूसरोंकी दृष्टिसे। यही सर्वधर्म-समभाव है। इसका मतलब यह है कि जिन बातोंमें हम सहमत हैं उनपर हमें ज्यादा जोर देना चाहिए। मतभेदोंकी बातोंपर ही जोर नहीं देना चाहिए। मुसलमान और ईसाईके धर्मके लिए मेरे मनमें आदर है, इसलिए मैं मुसलमान या ईसाई नहीं बन जाता। मेरा मतलब तो यह है कि उन धर्मोंके लिए मुझे उतना ही आदर है जितना

Scanned by CamScanner

कि मेरे अपने धर्मके लिए होगा। मैं मुसलमान या ईसाई नहीं बनूँगा। यदि मैं असहिष्णु रहा तो मेरे 'कुरान' और 'बाइबल' पढ़ने से क्या फायदा? सर्वधर्म-सम-भावका यह ठीक अर्थ नहीं है। राजकारणमें भी जिनसे हमारा मतभेद है उनको हम ऐसा ही देखें। समाजवादीको इसी दृष्टिसे देखें। इस तरहसे देखेंगे तो जो मतभेद होंगे वे क्षणिक होंगे। हम तो जहाँतक हो सके, झगड़ोंको मिटाने की ही कोशिश करते रहेंगे। अगर हम ऐसा न करेंगे तो हमारे दिमाग छोटे हो जायेंगे। हम छोटे-छोटे मतभेदोंको लेकर बैठ जायेंगे। जिस धर्मका मनुष्य ध्यान करता है उसीके समान बन जाता है। जो बड़ी-बड़ी बातें हैं उनको हम भूल जायेंगे, केवल मतभेदकी छोटी-छोटी बातें ध्यानमें रखेंगे तो इससे देशका सर्वनाश हो जायेगा।

जिन बातोंमें हम सहमत हो सकते हैं उन्हें खोजना मुश्किल क्यों होता है? परस्पर विश्वास और सरल चित्तसे दूसरोंकी बात समझ लेने की तैयारी यही अहिंसाका राजमार्ग है। इसी सिलसिलेमें उसी परिपत्रकी[1] बात फिर ले लेता हूँ। उसे मैं दुबारा पढ़ गया। उसका भी मध्य बिन्दु यही है। वहाँ मध्य बिन्दु सरदार हैं। बहुत-से लोगोंके दिलमें ऐसा है कि सरदार ठीक काम नहीं करते। नरीमान, खरे, सुभाषके प्रकरणमें उन्होंने अन्याय किया ऐसा वे मन-ही-मन मानते हैं। अगर ऐसा है तो वह साफ-साफ कह देना चाहिए। अहिंसावादीका यह शाश्वत धर्म है। सारे जगत्के प्रति हमारा यह धर्म है। किसीके प्रति हमारे दिलमें अविश्वास या रोष पैदा हो जाये तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसके पास सीधे चले जायें और उससे समझ लें। इस सम्बन्धमें 'बाइबल' के दो वचन हैं उन्हें याद रखना चाहिए। नीतिके विषयमें 'बाइबल', या दूसरे किसी भी धर्मग्रन्थका वचन, वेदके वचन इतना ही प्रमाण होना चाहिए। उनमें से एक वाक्य तो यह है कि "अपने प्रतिपक्षीसे जल्दी समझौता करो।"[2] और दूसरा यह है कि "अगर किसीके बारेमें तुम्हारे दिलमें कुछ गुस्सा है तो उसपर सूर्यको न डूबने दो। सूर्यास्तसे पहले ही उसके पास चले जाओ और उससे बातचीत कर लो"[3] मेरे लिए तो ये वाक्य वेदवाक्यसे कम कीमती नहीं हैं। यही अहिंसाकी जड़ है। सच्ची बात तो यह है कि अहिंसाको हिंसाके मुँहमें चले जाना है। अगर आपके दिलमें यह है कि सरदारकी तरफसे सुभाष बाबूको अन्याय हुआ, नरीमानके साथ अन्याय हुआ, खरेके साथ अन्याय हुआ, तो मैं कहता हूँ, खरे-प्रकरण, नरीमान-प्रकरणमें दोष मेरा है। मैं सरदारको बचाने के लिए यह नहीं कह रहा हूँ। मैं सच्ची बात कह रहा हूँ। लेकिन अब तो वह अप्रस्तुत है। मैं सत्यार्थी, सत्यवादी, सत्याग्रही, ये सब विशेषण अपने लिए लगाता हूँ। इसलिए मैं जान-बूझकर अन्याय करनेवाले का साथ नहीं दूँगा। लेकिन आपके दिलमें अगर सरदारके प्रति कुछ है, तो आपको चाहिए कि उनसे जाकर पूछें। उनकी सफाईसे सन्तोष न हो और आपके दिलमें कुछ खटकता रहे तो आपका धर्म हो जाता है कि सरदारको आप संघमें से मुक्ति दे दें। इससे वे गांधी सेवा

१. देखिए पृ० २२१, पा० टि० २।
२. सेंट मैथ्यू, ५·२५।
३. इफेसियन्स, ४·२६।

Scanned by CamScanner

संघके मिट नहीं जाते। मैंने कांग्रेससे मुक्ति ली तो कांग्रेसकी सेवा पहलेसे अधिक की। यदि आपने सरदारको संघसे मुक्त कर दिया तो आप उनके वैरी बन गये, या वे आपके वैरी वन गये, ऐसी बात नहीं है।

मैं जो सरदारके लिए कहता हूँ वह सबके लिए कहता हूँ। अपने यहाँ अप्पा पटवर्धन हैं। वे बड़े गणितशास्त्री हैं। गणितसे वे चरखे या यंत्र और इस्तेमाल करने का तरीका सूक्ष्मतासे दिखा सकते हैं। उन्हें चरखेमें श्रद्धा है, खादीको भी मानते हैं, अहिंसामें भी विश्वास रखते हैं। लेकिन, मान लीजिए कि उनके मनमें शंका उत्पन्न हो गई है। उनका सदस्योंकी सचाईपर से विश्वास उठ गया है। तो क्या उन्हें संघमें रहना ही चाहिए? अथवा, क्या यह जरूरी है कि वे संघके सदस्य नहीं हो सकते इसलिए वे संघके सदस्योंकी तरह सेवा ही क्यों करें? और वे संघके सदस्य नहीं हो सकते, इसलिए क्या वे हमसे बुरे आदमी हैं? लेकिन जब परस्पर अविश्वास उत्पन्न हो जाये, तो कोई संघ नहीं बन सकता। जबतक हमारा दिल ऐसा मानता है कि संघका कोई आदमी जान-बूझकर बुरा कार्य नहीं करेगा तभी तक हमारा मार्ग सरल रहेगा। अगर हमारे दिलमें ऐसा कोई शक पैदा हो ही जाये तो हमें एक-दूसरेसे सफाई माँगनी चाहिए। मेरे कहने का मतलब यह नहीं है कि जो इस तरह सरदारके बारेमें शंका करते हैं वे गंदे हैं और सरदार भले हैं। मैं ऐसी बात अपनी जबानसे नहीं निकालूंगा। मैंने तो सिर्फ रास्ता बताया। सरदार तो खुद ही कह रहे हैं कि यदि मेरे बारेमें शंका हो तो मैं संघमें क्यों रहूँ? आप जानते होंगे कि कुछ दिन पहले सरदार और जमनालालजी के बीच कुछ तनातनी और बोलचाल हो गई। जमनालालजी ने कहा कि मैं संघमें से चला जाता हूँ। सरदारने कहा कि उन्होंने तो संघ बनाया है वे क्यों जायें? मैं जाता हूँ। दोनों कहने लगे कि हमें छुट्टी दे दीजिए। हम काम करते रहेंगे। न वे गये और न ये गये। क्योंकि दोनोंके दिलमें एक-दूसरेके खिलाफ कुछ था ही नहीं। जो-कुछ समझफेर था वह चला गया। कोई वैमनस्यका सवाल तो था ही नहीं। इसी तरह आज भी सरदार कह रहे हैं कि मुझे मुक्ति दे दो। हमारे दिलमें अगर उनके लिए शक रह जाता है तो उसे रफा करना चाहिए। अगर ज्यादा आदमियोंके दिलमें शक रहे तो सरदारको निकल जाना चाहिए।

लेकिन एक भी आदमीके मनमें किसी सदस्यके लिए अविश्वास नहीं रहना चाहिए। जबतक ये चीजें छोटे पैमानेपर हैं तबतक वे महत्त्वकी नहीं दीखतीं। लेकिन बड़े पैमानेपर ये बातें पैदा हो जायें तो संघ ही नहीं रह सकता। तब तो यह नतीजा निकालना पड़ेगा कि इस युगमें सत्याग्रहियोंका और अहिंसावादियोंका कोई संघ ही नहीं बन सकता। लेकिन मेरा तो यह दावा रहा है कि सत्यवादियोंका संघ तो बिलकुल सरलतासे बन सकता है। मैंने तो अपने जीवनमें सत्य और अहिंसाको सामुदायिक धर्म बनाने की ही विशेष चेष्टा की है। अगर हमारी संस्थामें परस्पर अविश्वास बड़े पैमानेपर पैदा हो जाये, पचास वर्षके बाद भी यदि मुझे कहना पड़े कि सत्यवादी और अहिंसावादियोंका कोई संघ नहीं बन सकता, तो मैं कहूँगा — मैं निर्लज्ज होकर कहूँगा — कि पचास वर्षके बाद मुझे यह अनुभव हुआ कि जो

Scanned by CamScanner

खास चीज मैंने अपने जीवनमें निकाली वह संघके रूपमें नहीं चल सकती। उसमें संगठित होने की शक्ति नहीं है। फिर तो इस संघको मिटा देना चाहिए। लेकिन आज तो मेरा दिल आशासे भरा पड़ा है। मैं सत्य और अहिंसाको संगठित रूप देना ही अपने जीवनका परम धर्म मानता हूँ।

अब देवका पहला प्रश्न आ जाता है। वह मुख्य प्रश्न है।

रचनात्मक कार्य और अहिंसाका घनिष्ट सम्बन्ध किस प्रकार है यह कृपया समझाइये।

अगर रचनात्मक कार्यका अहिंसासे घनिष्ट सम्बन्ध नहीं है तो दुनियामें दूसरी किस चीजका हो सकता है? हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य, अस्पृश्यता-निवारण, मद्यनिषेध और चौथा चरखा। पहली तीन बातोंका अहिंसासे जो सम्बन्ध है वह तो बिलकुल स्पष्ट ही है। कोई अहिंसावादी एक क्षणके लिए भी किसीको अस्पृश्य कैसे मान सकता है? शराबसे अपनी बुद्धिको भ्रष्ट कैसे कर सकता है? मुसलमानोंसे या दूसरे धर्मवालोंसे बैर कैसे कर सकता है? जबतक ये चीजें नहीं होंगी तबतक सामुदायिक सत्याग्रह नहीं हो सकता। यह चीज मेरे लिए है और सुभाष बाबूके लिए भी है। इन शर्तोंके बिना सुभाष बाबू भी सत्याग्रह नहीं करा सकते।

अब रहा चरखा। मेरे लिए तो चरखा अहिंसाकी प्रतिमा है। उसका आधार, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, संकल्प है। रामनामकी भी वही बात है। रामनाममें कोई स्वतंत्र शक्ति नहीं है। वह कोई कुनैनकी गोली नहीं है। कुननकी गोलीमें स्वतन्त्र शक्ति है। उसमें कोई विश्वास करे या न करे। वह 'अ' को मलेरिया हुआ तो भी काम देती है और 'ब' को हुआ तो भी काम देती है। जहाँ-जहाँ मलेरियाके जन्तु हों वहाँ-वहाँ वह उनका क्षय करती है। रामनाममें ऐसी स्वतंत्र शक्ति नहीं है। मंत्रमें शक्ति संकल्पसे आती है। गायत्री मेरे लिए मंत्र है। उसमें मैंने अपने मोक्षका संकल्प किया है। मुसलमानके लिए उसका कलमा मंत्र है। मैं कलमा पढ़ूं और एक मुसलमान कलमा पढ़े इसमें बहुत बड़ा फर्क है। मुसलमान कलमा पढ़े तो वह एक अनोखा आदमी बन जाता है। क्योंकि उसने उसमें अपने मोक्षका संकल्प किया है।

चरखेमें ऐसी कोई स्वतंत्र शक्ति नहीं कि वह आपको स्वराज्य दे। लेकिन अगर मैं इस संकल्पको लेकर बैठ जाता हूँ कि मैं चरखेकी मारफत अहिंसाके पाठ पढ़ूंगा, मैं उससे स्वराज्य लूंगा तो चरखा मेरे लिए स्वराज्यका साक्षात् साधन बन जाता है। गांधी सेवा संघमें चरखेको जो स्थान मिला है वह सिर्फ इसलिए नहीं कि गरीबोंको दो पैसे मिलेंगे। केवल आर्थिक दृष्टिसे आध घण्टा सूत्रयज्ञकी क्या जरूरत है? और उसमें मौनकी क्या जरूरत है? आध घण्टा कातने से आप कितना-सा सूत निकाल लेंगे? १९२० में राष्ट्रने अहिंसक उपायोंसे स्वराज्य लेने का संकल्प किया। उस संकल्पके अधीन होकर हम यहाँ चरखा चलाते हैं। इस तरह चरखा प्रजाके संकल्पकी — हिन्दू-मुसलमान, गरीब-अमीर, बच्चे और बूढ़े, सबके संकल्पकी — प्रतिमा है। इससे ज्यादा घनिष्ट सम्बन्ध आपको क्या बता सकूं?

Scanned by CamScanner

जबतक घर-घर चरखा न हो, संपूर्ण शराबबन्दी न हो, जबतक हिन्दू-मुसलमानोंकी एकता न हो, और अस्पृश्यताका पूरा-पूरा नाश न हो, तबतक सारे हिन्दुस्तानका एक सामुदायिक सत्याग्रह, जो सुभाष बाबूके दिलमें है और जो मेरे दिलमें भी है, हम नहीं कर सकते। तबतक हम सिविल ना-फरमानीके लायक नहीं बन सकते।

सविनय भंग करने का अधिकार तभी आयेगा जब हम अपने बनाये कानून, अपनी खुशीसे पालेंगे। आज मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं देवसे कहूँ कि कोल्हापुरमें सत्याग्रह करो, रामचन्द्रन्से कहूँ त्रावणकोरमें करो और राधाकृष्णसे कहूँ कि जयपुरमें सत्याग्रह शुरू कर दो। दो महीने पहले तो मैं उन्हें इजाजत देने को तैयार था। दो महीने पहले जो बातें मुझे भद्दी नहीं लगतीं थीं वे आज लगती हैं। इसलिए मैंने जमनालालजी को परवानगी दे दी थी। लेकिन आज कुछ चीजोंका नया वजन और नई कीमत मेरे दिलमें आ गई है।

ये चीजें मुझे राजकोटकी प्रयोगशालामें मिलीं। उस प्रयोगमें से जो बड़ी शक्ति मुझे मिली उसके बहुत मधुर परिणाम निकले। राजकोटकी बातोंका बयान करके मैं आपको हँसा सकता हूँ। वहाँ जो शक्ति मुझे मिली उसके मधुर रसका घूँट ले रहा हूँ। वायुमण्डलपर मेरा काबू आ रहा है। मेरा काम सरल हो रहा है। मैं ज्यादा आदमियोंसे काम नहीं ले सकता। क्योंकि मैं सख्त हो गया हूँ। पर मुझे क्या परवाह है कि मुझे राजकोटमें पाँच ही आदमी मिलें? उन्हींकी मददसे मैं कामको अंजाम दे दूँगा। पाँच हों तो उन्हींको लेकर लड़ाई शुरू कर सकता हूँ। बीसके सालमें मैंने कह दिया था कि अगर एक भी सच्चा सत्याग्रही मिल जाये तो काम शुरू कर सकते हैं। और अवश्य विजय पायेंगे। इसके साक्षी शायद वल्लभभाई होंगे। मेरी चेष्टा ऐसा सत्याग्रही बनने की है।

जब रौलट ऐक्टकी बात आ गई तब मैंने कहा इसपर इलाज तो है। लेकिन मैं अकेला तो नहीं कर सकता। क्योंकि मैं अपूर्ण सत्याग्रही हूँ। चन्द आदमी आ जायें तो कुछ कर लूँ। तब वह शंकरलाल आ गया, हार्निमैन, सरोजिनी, जमनादास द्वारकादास, और -- वह बेचारा मर गया, उमर सोबानी -- वह भी आ गया। इन सबका सहयोग मिला। ऐसा एक 'शंभुमेला' बन गया। फिर भी उसने सारे हिन्दुस्तानको जगाया और मेरी शक्तिको बढ़ाया। सब लोगोंकी तरफसे मुझे गर्मी चाहिए, सहायता चाहिए। सबकी सहायता लेने और संगठन करने की कोशिश में अपनी शक्तिको मैं बढ़ा रहा हूँ। आत्मनिरीक्षणकी मेरी शक्ति बढ़ रही है। मैं बड़ा स्वार्थी आदमी हूँ। मैं आपको वक्त देकर आपका निरीक्षण नहीं करता। मैं अपने वक्तकी काफी कीमत करता हूँ। अगर मैं समझूँ कि आपको वक्त देकर मैं अपना कोई फायदा नहीं करता तो ऐसी आत्महत्या मैं नहीं करूँगा। जब यह मैं देखता हूँ कि आपको वक्त देकर मैं कुछ पाता हूँ तभी वक्त देता हूँ। आप कुछ पाते हैं या नहीं इसकी दरकार मुझे नहीं है। मैं तो सिर्फ इतना ही देखता हूँ कि मैं कुछ पाता हूँ या नहीं। कहीं मेरा पतन तो नहीं हो रहा है? आपको फुसलाने के लिए मैं वक्त नहीं देता। मैं तो अपनी शक्तिको बढ़ाता हूँ। और इस

Scanned by CamScanner

तरह मेरी शक्ति बढ़ती ही गई। भले ही मैं सत्तर वरसका बूढ़ा हो गया हूँ। मेरी शक्ति क्षीण नहीं हुई है। मैं अपनी जिम्मेवारीको समझता हूँ। जिस प्रतिज्ञाको ले लूंगा उसे पूरी करूँगा। फिर अकेला भी रह जाऊँ तो क्या? ट्रान्सवालमें मैंने ऐसा ही किया। मैंने प्रतिज्ञा कर ली कि मैं अकेला भी रह जाऊँ तो इस ट्रान्सवाल सरकारसे लड़ूंगा और विजय पाऊँगा। उस वक्त सत्याग्रहका जन्म भी नहीं हुआ था। करोड़ों लोगोंका संगठन इस तरह संकल्प-मात्रसे हो जाता है। मेरे पास इसके बहुत-से सबूत पड़े हैं। जब ६ अप्रैलकी हड़तालका[1] निश्चय हमने कर लिया तब क्या हुआ? कोई संगठन नहीं किया था। लेकिन हिन्दुस्तानके कोने-कोनेमें उपवास और हड़ताल हुई। वहींसे हिन्दुस्तानके स्वराज्यका जन्म हुआ। संकल्प-मात्रसे इतना काम हुआ लेकिन रचनात्मक कार्यकी तालीम न होने से वह चल न सका। जबतक आपके नजदीक रचनात्मक कामकी इतनी कीमत नहीं होगी कि उसके सिवा सविनय भंग चल ही नहीं सकता तबतक आपको निराशा ही होगी। रचनात्मक काममें दिन भले ही लग जायें लेकिन दूसरा रास्ता नहीं है।

रचनात्मक कामके बिना हम सविनय भंगको अंजाम नहीं दे सकते। उसके बिना अहिंसक वातावरण पैदा ही नहीं हो सकता। मेरे काम करने का यही तरीका रहा है। इसलिए जब सुरेन्द्र गुजरातमें चला गया तब मैंने उससे कहा कि अगर तुम्हारी सेवा कोई न चाहे, तुम्हारे पास कोई न आये, तो तुम्हारे पास चरखा तो पड़ा है न? चौबीस घण्टे वही चलाओ। संकल्पपूर्वक चरखा चलाओगे तो उसीसे सेवा होगी। मुझे उसमें कोई शंका नहीं है। मेरा तो विश्वास दिन-प्रतिदिन दृढ़ और दृढ़ ही होता जाता है।

गांधी सेवा संघके पंचम् वार्षिक अधिवेशन, (वृन्दावन, बिहार) का विवरण, पृ० ३०-४०

Scanned by CamScanner